छठवां अंक

जुलाई, 2020

आत्मा राम सनातन धर्म महाविद्यालय

समन्वय

संरक्षक: प्राचार्य, डॉ. ज्ञानतोष कुमार झा

संयोजक: डॉ. अरविंद कुमार मिश्र

संयोजक समिति: श्री दीपांकर, डॉ. श्रीधरम

संपादक मंडल

हर्षिता शंकर
इतिहास विभाग, तृतीय वर्ष

यमुना कुमार
हिंदी विभाग, द्वितीय वर्ष

कार्तिकेय मिश्र
इतिहास विभाग, प्रथम वर्ष

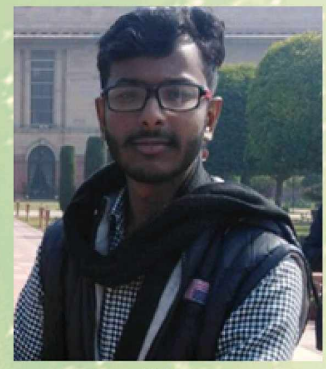

सुलभ यादव
राजनीति विज्ञान विभाग, द्वितीय वर्ष

सौरभ
हिंदी विभाग, प्रथम वर्ष

डिजिटल समन्वयक

के. आर. स्वाति
अंग्रेज़ी विभाग, द्वितीय वर्ष

अनुक्रमणिका

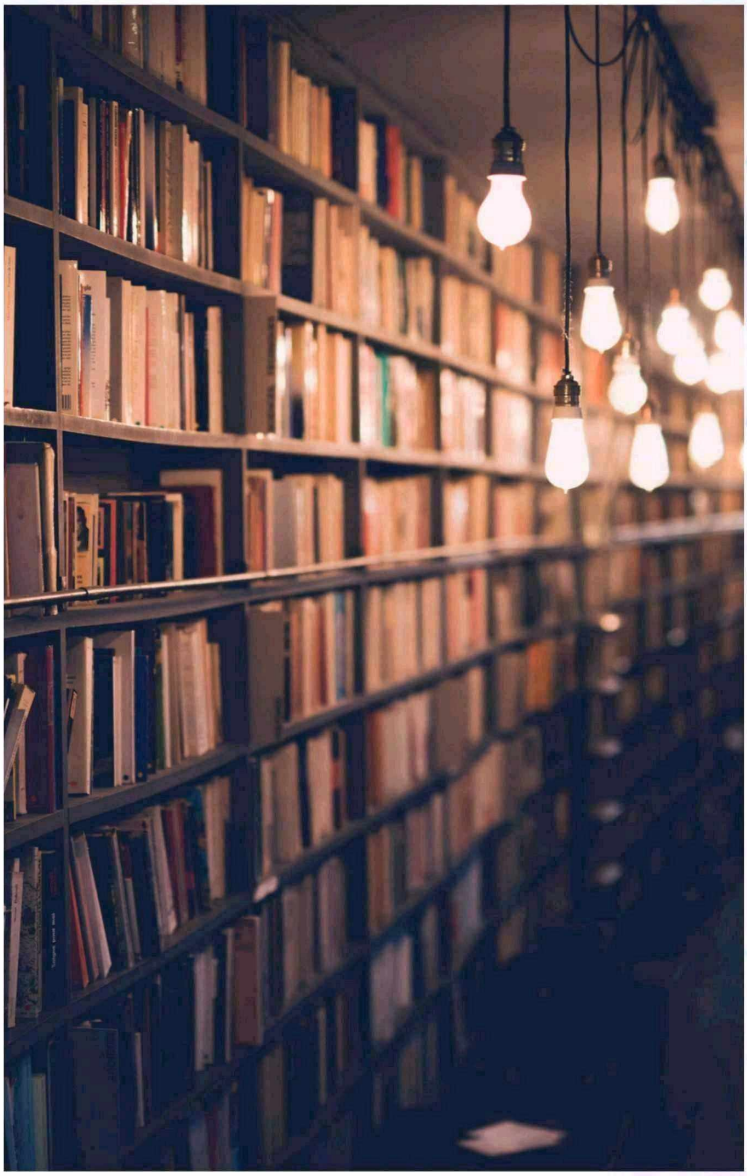

2
संपादकीय

3 स्वच्छ भारत अभियान
हर्षिता शंकर

6 कारगिल युद्ध का वह वीर अमर शहीद नायक जो परमवीर चक्र चाहता था
कार्तिकेय मिश्र

11 क्या प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत आर्थिक ठहराव का काल था ?
साईं विश्वकर्मा

19 छठवीं शताब्दी ईसा पूर्व से चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के बीच हुए आर्थिक बदलाव
साईं विश्वकर्मा

24 11 वीं और 13 वीं सदी के बीच आर्थिक परिवर्तन
अमित कुमार

28 रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना
सौरभ मौर्य

35 रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना
सौरभ मौर्य

41 COVID -19 महामारी की पहचान और परिणाम
ज्योत्सना (प्रस्तुति हर्षिता शंकर)

(इस अंक में प्रस्तुत सभी आलेख के लिए उसके लेखक स्वयं जिम्मेदार होंगे)

सम्पादकीय

अंतरअनुशासनिक पत्रिका 'समन्वय' का प्रस्तुत अंक आप सबके सामने है। पत्रिका के इस अंक में हमारे बी.ए. और एम.ए. के विद्यार्थियों द्वारा पहली बार शोधपूर्ण आलेख लिखने का प्रयास किया गया है जिसे हम आपके समक्ष प्रस्तुत करने जा रहे हैं। इस अंक में पहला आलेख हर्षिता शंकर (हिस्ट्री ऑनर्स- तृतीय वर्ष) का- 'स्वच्छ भारत अभियान'- है जिसमें स्वच्छता अभियान पर युवा पीढ़ी की निगाह से एक सार्थक विचार प्रस्तुत किया गया है। दूसरा आलेख कार्तिकेय मिश्रा (हिस्ट्री ऑनर्स- प्रथम वर्ष) का – 'कारगिल युद्ध का वह वीर अमर शहीद नायक जो परमवीर चक्र चाहता था!'- है। यह आलेख भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों को याद करते हुए आज के हमारे युद्धवीर सैनिकों(शहीद, परमवीर चक्र से सम्मानित, कैप्टन मनोज पाण्डेय) की त्याग, तपस्या और बलिदान को समर्पित है। आलेख(दूसरा विस्तृत आलेख) साईं विश्वकर्मा का- 'क्या प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत आर्थिक ठहराव का काल था'- है। यह आलेख भारत के प्रारंभिक मध्यकाल के आर्थिक इतिहास को लेकर मौजूद बहस को हमारे सामने उपस्थित करता है। इसी लेख को आगे बढ़ाते हुए इस अंक में दूसरा आलेख-'11 वीं और 13 वीं सदी के बीच आर्थिक परिवर्तन'-अमित कुमार का है। छठा आलेख सौरभ मौर्य का- 'रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना'- है। यह आलेख हिंदी के प्रसिद्ध कवि रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना के विविध पहलू पर विचार व्यक्त करता है। एक अन्य लेख संक्षिप्त प्रस्तुति आलेख है जो COVID-19 महामारी को लेकर है। यह आलेख नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ़ इम्युनोलॉजी की वरिष्ठ शोधार्थी ज्योत्सना से की गयी बातचीत पर आधारित है जिसे हर्षिता शंकर ने प्रस्तुत किया है।

इस अंक में सृजनात्मक प्रतिभा के उदहारण के तौर पर हमने बी.ए. ऑनर्स हिंदी, तृतीय वर्ष के छात्र रहमतुल्लाह की कहानी 'अधूरा सपना' को जगह दी है। यह कहानी कूड़ा-कचरा चुनने वाले दो बच्चों की कहानी है जो अपने विन्यास(स्ट्रक्चर) में एक सरल कहानी है लेकिन उसमें मौजूद संवेदनशीलता बहुत प्रभावित करती है। रहमत की एक अन्य कहानी 'आम के छिलके' हिंदी की लोकप्रिय और प्रसिद्ध पत्रिका 'आज कल' में प्रकाशित हो चुकी है। महत्वपूर्ण बात यह है कि 'आम के छिलके' कहानी भी सबसे पहले समन्वय पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। यह समन्वय पत्रिका और उसकी टीम के लिए ख़ुशी की बात है कि पत्रिका प्राचार्य महोदय द्वारा निर्धारित उद्देश्य की तरफ धीरे-धीरे कदम बढ़ा रही है। समन्वय के इस वर्तमान ई-संस्करण के सम्पादन का अधिकतम दायित्व हर्षिता शंकर ने निभाया है। उनके नेतृत्व में संपादकीय टीम ने पूरी मेहनत के साथ इस अंक को प्रकाशित किया है। अपनी खामियों और खासियत के साथ यह अंक आपके सामने है।

स्वच्छ भारत अभियान

सिर्फ स्वच्छता की बात करना एक सामान्य बात है जिसे सुनकर नजरअंदाज किया जा सकता है, लेकिन जब बात स्वच्छता अभियान की हो और वह भी माध्यमों की सवारी करता हुआ व्यापक प्रचार-प्रसार के साथ आपके सामने उपस्थित हो तो कुछ पल के लिए ठहर कर सोचना जरूरी हो जाता है । सामान्य बातचीत में स्वच्छता का जिक्र होना एक फौरी प्रतिक्रिया मानी जा सकती है । स्वच्छता अभियान के सन्दर्भ में यह बात महत्वपूर्ण है कि यह सरकार विशेष के द्वारा पूरी प्रतिबद्धता और मिशन के साथ सामने आया । ऐसे में न सिर्फ इसका महत्व बढ़ जाता है बल्कि यह स्वच्छता की परंपरागत धारणा के सन्दर्भ में हमें मूल्यांकन और विश्लेषण के लिए भी प्रेरित करता है । इसके लिए काफी विस्तार में जाने की अपेक्षा है । यहाँ यह संभव नहीं है । थोड़े बहुत अध्ययन के उपरांत मैं संक्षेप में कुछ बातें प्रस्तुत कर रही हूँ ।

2014 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने "हमारे चारों ओर की गंदगी" को साफ करने का संकल्प लिया, जो उनके अनुसार, पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने के रास्ते में एक बाधा है,यह उद्योग जो सबसे गरीब लोगों को रोजगार प्रदान करता है। श्री मोदी ने गांधी की 150 वीं जयंती पर 2019 तक स्वच्छ भारत के सपने को पूरा करने के लिए अपनी सरकार के संकल्प की घोषणा की। स्वच्छ भारत अभियान (SBA) एक अभूतपूर्व राष्ट्रव्यापी पहल थी जिसका उद्देश्य जनता को स्वेच्छा से सार्वजनिक स्थलों को, राष्ट्र की सेवा के रूप में, स्वच्छ बनाना था। अभियान ने शुरू में मशहूर हस्तियों की तस्वीरों - सड़कों पर "स्वेच्छा से" सफाई करते हुए- को अख़बार और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से प्रचारित किया । वाणिज्यिक मीडिया द्वारा परिचालित ये चित्र सोशल मीडिया पर ट्रेंड हुए। समवर्ती रूप से नगरपालिकाओं ने इस कार्य के लिए अधि- संविदात्मक मजदूरों को नियुक्त करना शुरू किया।

पश्चिमी दृष्टिकोण को अपनाना

यह दृष्टिकोण 19 वीं शताब्दी के पश्चिमी मॉडल -सार्वजनिक तरीके से कचरे को हटाने का एक गैर-गोद लेने वाला तरीका-को अपनाना है । यद्यपि पश्चिम में बीमारी के प्रसार को रोकना इसका प्राथमिक उद्देश्य था, लेकिन स्वच्छता अब काफी हद तक दृश्य सौंदर्यशास्त्र का विस्तार है - स्वच्छता का अर्थ है "हमारे चारों ओर की गंदगी की सफाई"।

पश्चिम ने कचरे को व्यवस्थित रूप से हटाने के लिए हमेशा प्रौद्योगिकी का विकास किया। उदाहरण के लिए, जब 1858 में लंदनवासियों ने 'ग्रेट स्टिंक' का अनुभव किया, तो सरकार ने महसूस किया कि इसे एक समग्र सीवरेज योजना की आवश्यकता होगी, जो कि लंदन के पानी के बुनियादी ढाँचे का हिस्सा बन जाएगी, ताकि गंदे पानी को दूर करने के लिए और स्थायी रूप से टेम्स नदी से अपशिष्ट का उपचार किया जा सके । जल्द ही, घरों और दुकानों में शौचालयों का निर्माण अनिवार्य हो गया।

'ग्रेट स्टिंक' , लंदन

स्वच्छ भारत अभियान शायद ही भूमिगत सीवरेज प्रणाली के एक पुनर्मूल्यांकन को संबोधित करता है। यह गंभीर चिंता का कारण है, क्योंकि हाल ही में सीवरेज सिस्टम में खुलने वाले जाम मैनहोलों की सफाई करते समय कई मजदूरों की मौत हो गई है। सबसे ज्यादा परेशानी ये है कि इन मौतों का एक जातिगत पैटर्न है। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय द्वारा दिसंबर 2017 में लोकसभा में दिए गए एक उत्तर के अनुसार मैनुअल स्केवेंजिंग के कारण होने वाली मौतों के 300 से अधिक मामले विशेष जाति समूहों से जुड़े हुए थे।

यह ज़रूरी है कि दंडात्मक उपायों से जनता को यह जानने के लिए प्रेरित करना चाहिए कि कचरे को कहां और कैसे फेंकना है । स्वच्छता अभियान जनता के बीच जागरूकता पैदा करने का कार्य करता है कि वह सार्वजनिक स्थानों पर शौच, पेशाब न करें और कूड़ा न फेंके। भारत में मैला ढोने की परंपरा-प्रक्रिया और पेशा प्रदूषण और जाति के कलंक को दर्शाता है। भारत की अपनी परेशानी है,यहाँ अपशिष्ट हटाने वाले पेशेवर नहीं होते जिस तरह पश्चिम में होते हैं। इसके अलावा कलंकित स्थान वे स्थान हैं जहाँ कचरे का निष्कासन होता है और उसका निपटान होता है। इस काम से जुड़े व्यक्ति,स्थान और समूह सभी को जाति प्रदूषण से दूषित माना जाता है। संक्षेप में यह मान्यता बन गयी है कि कलंक(सफाई एक नीच कार्य है) पेशे, श्रम और शरीर में रहता है।

अतीत में नगर पालिकाओं ने दुकानों और घरों के लिए सामान्य स्थानों पर कचरे के निपटान के लिए डिब्बे लगाए थे। पहले ये डिब्बे हटाए जाने वाले थे, क्योंकि मिशन ने डोर-टू-डोर कलेक्शन की पेशकश की थी। श्रमिकों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने निर्धारित क्षेत्रों में आने पर अपनी उपस्थिति की घोषणा करें। तत्पश्चात घरों से सदस्य अनियंत्रित कचरा लाते हैं, श्रमिक उन कचरों को एक बोरे में इकट्ठा कर एक निर्दिष्ट स्थान पर संग्रहित करते हैं जहाँ से इसे खाद यार्ड में ले जाया जाता है। अभियान के अनुसार, श्रमिकों को कचरे को अलग करने के लिए यार्ड में जाना पड़ता है। लैंडफिल में कचरे को व्यक्तिगत रूप से अलग करना उनकी स्वच्छता और स्वास्थ्य से समझौता करता है।

डोर-टू-डोर सेवा में 'गहरे रंग' के आवरण हैं। 1993 में जब तक उन पर प्रतिबंध नहीं लगाया गया, तब तक डोर-टू-डोर सेवा के माध्यम से शुष्क शौचालय को खाली कर दिया जाता था। सफाईकर्मी के आगमन पर नगरपालिका का अधिकारी एक सीटी बजाता था और संबंधित घर के लोग अपने शौचालय से दूर चले जाते थे। सफाईकर्मी एक विशेष पात्र के माध्यम से सफाई का काम करते थे।अधिकारी द्वारा सीटी बजाया जाना न केवल कार्यकर्ता की उपस्थिति की घोषणा करता था बल्कि यह एक निम्न जाति के निकाय की उपस्थिति की भी घोषणा करता था जिसके संपर्क से सभी लोग बचना चाहते थे।

भारत की परंपरागत सफाई व्यवस्था उन्हीं पुरानी प्रथाओं को दर्शाते हैं, जहाँ निचली जातियों के सदस्यों को सार्वजनिक स्थानों पर चलते समय सीटी बजाना आदि करना पड़ता था, ताकि ऊंची जाति के लोगों को उनके रास्ते को पार करने से रोका जा सके। 'मेहतर' के शरीर की उपस्थिति ऊंची जाति के लोगों द्वारा प्रदूषण के रूप में देखा जाता था। इस धारणा में एक स्थानिक सहसंबंध है - शौचालय आमतौर पर रहने वाले स्थानों से दूर निर्मित होते थे आज भी यही है।

उदाहरण के लिए अग्रहारम (अनन्य ब्राह्मण प्रवर्ग) में और यहां तक कि कुछ गैर-ब्राह्मण घरों में भी घर के पीछे शौचालय का निर्माण किया जाता था ताकि शौचालय की सफाई के समय आने-जाने वाला मेहतर अदृश्य रहे । इसी तरह पारंपरिक भारतीय घरों में शौचालय थे जो अक्सर 'मेहतर' के लिए एक विशेष पथ के साथ परिसर की सीमा पर स्थित होते थे। स्पष्ट रूप से, एक तरफ प्रदूषण की हिंदू धारणाएँ और दूसरी ओर कलंक की धर्मनिरपेक्ष धारणाएँ स्पष्ट रूप से शौचालय के निर्माण को प्रभावित करती थी।

यह विशेष लक्षण औपनिवेशिक वास्तुकला में भी परिलक्षित होता है। शिमला में भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, जिसे पहले लॉज कहा जाता था, में तीन प्रवेश द्वार हैं: निवासियों और मेहमानों के लिए एक, नौकरों के लिए एक

एक और विशेष रूप से सफाईकर्मियों और मेहतरों के लिए एक अलग प्रवेश द्वार है । गौरतलब है कि औपनिवेशिक भारतीय वास्तुकला में, मैला ढोने वालों की सीढ़ी नौकरों की सीढ़ी से नहीं टकराती थी। वाईस रीगल लॉज के मूल नियोजन दस्तावेज़ में इस एकांत मार्ग के स्पष्ट संदर्भ हैं।

यह महत्वपूर्ण है कि शौचालय को भारत में इमारतों और सार्वजनिक वास्तुकला के आवश्यक भागों के रूप में नहीं देखा जाता है। उदाहरण के लिए, दिल्ली मेट्रो ने अपनी मूल योजना में सभी स्टेशनों के शौचालयों को शामिल नहीं किया था। एक जनहित याचिका के बाद ही दिल्ली उच्च न्यायालय ने मेट्रो अधिकारियों को शौचालय बनाने और सभी स्टेशनों में अन्य सुविधाएं प्रदान करने का निर्देश दिया था। यह निरीक्षण केवल शौचालयों के स्थान से किया जाता है। उदाहरण के लिए, मंदिरों ने आमतौर पर शौचालय का निर्माण नहीं किया। अगर किसी मंदिर में शौचालय का निर्माण किया जाता है तो वे सीमा से दूर निर्मित होते हैं।

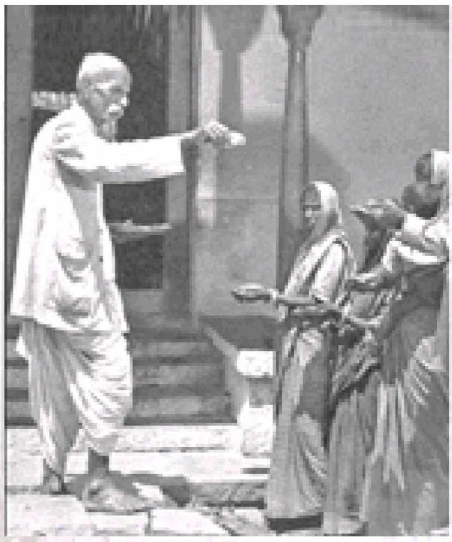

कलंक को संबोधित करना

विद्वानों का मानना है कि धर्मनिरपेक्ष स्वच्छ भारत अभियान और मैनुअल स्कैवेंजिंग के जातिवादी रूप के बीच स्पष्ट समानता है । इस बात पर किसी का ध्यान नहीं गया है। धर्मनिरपेक्षता दिखाने वाला स्वच्छ भारत जाति को छुपाने के अलावा कुछ नया नहीं देता। स्वच्छ भारत अभियान कचरे की सफाई और निपटान के बीच एक विवाद को ख़त्म करता है। इसमें सफाई एक स्वैच्छिक सेवा है जिसे ऊंची जाति के लोगों के साथ सबको शुरू करने के लिए कहा जाता है, जबकि कचरे को इकट्ठा करना और निपटान करना नगरपालिका में नियुक्त विशेष जाति के श्रमिकों का ही एक कर्तव्य बना हुआ है। स्वच्छ भारत अभियान की कोई भी ठोस उपलब्धि तभी संभव है जब स्वच्छता, श्रम और स्थान से जुड़े कलंक(सफाई कर्म ,सफाई कर्मी को नीची निगाह से देखना) को इन व्यवसायों को जाति-बेअसर कर प्रौद्योगिकियों को अपनाने के माध्यम से आलोचनात्मक रूप से संबोधित किया जाए। इसके बिना शहरों को साफ रखने के लिए किसी भी अभियान में सफल होने की संभावना नहीं के बराबर है। इस सन्दर्भ में स्वच्छता अभियान स्वच्छता व्यवस्था में बदलाव के साथ-साथ नयी प्रोद्योगिकी के उपयोग की ज़रूरत की तरफ इशारा करता है। दिल्ली जैसे शहरों में जब आज भी यह खबर सुनने को मिलती है कि सीवर सफाई का काम करते हुए दो या चार सफाई कर्मी की मौत हो गयी तो स्वच्छता को लेकर हमारे दृष्टिकोण में मौजूद अधूरापन स्पष्ट रूप से झलकने लगता है और सुचिंतित व्यवस्थित प्रयास का नितांत आभाव दिखाई देता है।

हर्षिता शंकर
इतिहास विभाग, तृतीय वर्ष

कारगिल युद्ध का वह वीर अमर शहीद नायक जो परमवीर चक्र चाहता था!

1999 कारगिल युद्ध का हीरो,परम वीर चक्र,अमर शहीद
कैप्टन मनोज कुमार पाण्डेय

भारत एक देश, एक विचार होने के साथ- साथ वीरता का पर्यायवाची भी है । यहां की मिट्टी में जन्में वीर, पराक्रमी योद्धाओं ने इतिहास के पन्नों में यह दर्ज करवाया है। फ़िर चाहे वह स्वतंत्रता से पूर्व मुस्कुराते हुए फांसी के तख्त पर चढ़ जाने वाले मात्र 19 वर्ष के क्रांतिकारी खुदीराम बोस हों, या 23 साल के शहीद भगत सिंह, उम्र की सीमा कभी भी हमारे देशभक्त युवाओं को अपने शौर्य का प्रदर्शन करने से नहीं रोक पाई है। वह शौर्य जिसकी चमक के आगे ब्रिटिश साम्राज्य की भी आंखें चौंधिया जाती थीं । स्वतंत्रता के बाद भी भारत में ऐसे वीरों की फसल लहलहाती नज़र आती है। ऐसे हीं एक बहादुर नौजवान के ऊपर मैं यह लेख लिख रहा हूं, जिन्होंने मात्र 24 वर्ष की उम्र में मातृभूमि की रक्षा करते करते 1999 करगिल युद्ध में वीरगति प्राप्त कर ली थी, आज ही के दिन तकरीबन दो दशक पूर्व, तारीख थी 3 जुलाई 1999.

लेकिन इस कहानी की शुरुवात होती है 25 जून 1975, उत्तर प्रदेश के सीतापुर ज़िले में, जहां गोपीचन्द्र एवं मोहिनी पांडेय जी के घर एक लड़के का जन्म हुआ जिसका नाम उन्होंने मनोज रखा । आर्थिक रूप से कमज़ोर घर में जन्में मनोज कुमार पाण्डेय, बचपन से ही भारतीय सेना का हिस्सा बनना चाहते थे। इस वतनपरस्त जज़्बे का श्रेय अक्सर उनकी माताजी को दिया जाता है जो उन्हें बचपन में स्वतंत्रता सेनानियों की वीरता एवं मातृभूमि के प्रति प्रेम का ज्ञान देती थीं। कक्षा आठवीं तक लखनऊ स्थित रानी लक्ष्मी बाई मेमोरियल सीनियर सेकंडरी स्कूल से शिक्षा लेने के बाद मनोज भाई ने सैनिक स्कूल में दाखिला ले लिया। इसके बाद तो मानों उनके सपनों को पंख लग गए, और वो भारतीय सेना का हिस्सा बनने की ओर ओर अग्रसर हो गए।

पढ़ाई हो या खेल कूद, मनोज कुमार पाण्डेय का नाम हमेशा छाया रहता और इसी का नतीजा था कि 1990 में उन्हें नेशनल कैडेट कॉर्प्स (NCC) के जूनियर कैडेट में सर्वश्रेष्ठ होने की उपाधि मिली। स्कूल से पढ़ाई पूरी करते ही उन्होंने नेशनल डिफेंस एकेडमी, यानि(NDA) की परीक्षा दी, देखते ही देखते उन्हें सर्विस सलेक्शन बोर्ड (SSB) इंटरव्यू के लिए भी बुलावा आ गया।

परमवीर चक्र (भारत का सर्वोच्च वीरता पुरस्कार)

यह किस्सा उनके जीवन के सबसे मशहूर किस्सों में से एक है और अपने आप में आत्मविश्वास और प्रेरणा से भरपूर भी। जो लोग इस पूरे दृश्य से वाक़िफ हैं वो बखूबी समझते होंगे कि SSB इंटरव्यू में किस तरह के सवाल पूछे जाते हैं। मनोज पाण्डेय एक ऊर्जावान युवा थे, एक सवाल जो अक्सर इंटरव्यू में पूछा जाता है वो उन पर भी दागा गया

आप भारतीय सेना में क्यों भर्ती होना चाहते हैं ?

मनोज भाई ने छूटते ही जवाब दिया
मुझे परमवीर चक्र हासिल करना है!

इतना सुनने के बाद इंटरव्यू ले रहे अधिकारी हलका सा मुस्कुराए, उन्होंने मनोज से पूछा,
क्या तुम जानते हो परमवीर चक्र कैसे मिलता है ?

मनोज भाई ने बेझिझक जवाब दिया
जी हां मैं जानता हूं कि परमवीर चक्र से अधिकतर मरणोपरांत ही नवाज़ा जाता है और यदि मुझे मौका मिले तो मैं जीते जी हासिल कर सकता हूं।

6 जून 1997 को उन्हें 11 गोरखा राइफल्स की प्रथम बटालियन में भर्ती कर लिया गया। गोरखा रेजीमेंट भारतीय सेना का विख्यात धड़ा है, जिसका श्रेय गोरखा सैनिकों की बहादुरी, आक्रामक एवं निर्भय स्वभाव को जाता है साथ ही साथ कुछ हद तक पूर्व सेना अध्यक्ष रहे सैम मानेकशॉ को भी, वह खुद गोरखा रेजीमेंट का हिस्सा रहे थे। गोरखा रेजिमेंट को लेकर उनका एक बयान बड़ा प्रसिद्ध हुआ था जिसमें उन्होंने कहा था,
"अगर कोई आदमी कहता है कि वह मरने से नहीं डरता है, तो या तो वह झूठ बोल रहा है या वह गोरखा है।"
~ फील्ड मार्शल सैम मानेकशॉ (पूर्व सेना अध्यक्ष)

यही नहीं, हाल के भारतीय चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ (CDS) जनरल बिपिन रावत भी गोरखा राइफल्स का हिस्सा रहे हैं।

फील्ड मार्शल सैम मानेकशॉ (पूर्व सेना अध्यक्ष) बाईं तरफ़ फोटो 01,
चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ (CDS) जनरल बिपिन रावत, फोटो 02

मनोज पांडेय जी को पहली पोस्टिंग मिली श्रीनगर फ़िर सियाचिन, जहां इतनी ठंड पड़ती है जिसकी कल्पना भी कर पाना आम नागरिकों के लिए मुश्किल है, तापमान -50 डिग्री सेल्सियस तक चला जाता है। इसके बावजूद मनोज भाई ने निवेदन किया कि उनको सबसे मुश्किल पोस्ट पर तैनात किया जाए।

गोरखा रेजीमेंट की एक प्रथा होती थी, हर साल दशहरे का त्यौहार वह बड़े धूम धाम से मनाते हैं, इसी दौरान प्रति वर्ष एक जानवर (अमूमन भैंसे या बकरे) की बली दी जाती थी। यह एक ट्रेंड बन चुका था कि जो भी सिपाही सबसे युवा और नया होता था बली उसी से दिलवाई जाती थी। सैनिक इतिहासकार, रचना बिष्ट रावत बताती हैं कि इसी कारण यह ज़िम्मेदारी मिली मनोज पांडेय जी को जो एक शुद्ध शाकाहारी एवं विनम्र स्वभाव के इंसान थे, और इस हिसाब से उनके लिए यह अंगारों पर चलने से कम नहीं था। मेरी राय में शाकाहारी होना तो एक तथ्य था ही लेकिन बहुत से मांसाहारी लोग भी पहली दफ़ा किसी जीव की बली अपने हाथों से देने में हिचकिचाएंगे ज़रूर। लेकिन उन्होंने फ़िर भी प्रथा का सम्मान करते हुए इस चुनौती को पूरा किया। इसके बाद वह अपने हाथ बार- बार धोते रहे, उनका आहत होना स्वाभाविक था। साल 2015 में रक्षा मंत्रालय द्वारा इस प्रथा पर रोक लगा दी गई।

4 मई 1999

सियाचिन में तैनात मनोज पाण्डेय की टुकड़ी को ऑपरेशन रक्षक में सहायता करने के लिए कारगिल जाने के आदेश मिले। सिपाहियों को कुछ खास जानकारी नहीं थी कि पड़ोसी मुल्क युद्ध छेड़ने वाला है या ये कुछ घुसपैठिए हैं जो गोलीबारी कर रहे हैं। इन बर्फीली पहाड़ियों पर तैनात रहने को खास तरह के उपकरणों की आवश्यकता होती है जो कभी- कभी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं करवाए जा सकते थे क्योंकि अमूमन विदेश से सामान आने में समय लगता था। एक बार की बात है बताते हैं मनोज भाई बर्फीली पहाड़ी पर हाथ में पैरों के मोजे पहन कर चढ़ गए थे।

कैप्टन मनोज कुमार पांडेय,(circled) ऑपरेशन विजय के दौरान अपने अन्य साथियों के साथ

2 जुलाई 1999

कैप्टन मनोज पांडेय की टुकड़ी को खालूबार को दुश्मन के चंगुल से मुक्त करवाने का आदेश मिला। रणनीति के नज़रिए से खालूबार की चोटी बहुत महत्वपूर्ण थी। ऊंचाई पर होने के साथ- साथ वह पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से सटा हुआ क्षेत्र था जहां से पाकिस्तान से सप्लाई आने का अनुमान था। यूनिट के कमांडिंग ऑफिसर कर्नल ललित राय स्वयं टुकड़ी का नेतृत्व कर रहे थे, सैनिकों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से वह अधिकतर सिपाहियों के साथ ही पाए जाते थे। तीन दिन पहले 22 ग्रेनेडियर्स की चार्ली कंपनी को खालूबार के लिए रवाना किया गया था। तीन दिन तक उनसे किसी प्रकार का संपर्क नहीं साधा जा सका।

उसके बाद एक मदद का सिग्नल आया। खालूबार के रिज लाइन (Ridge Line) को बाई पास करके गोरखा टुकड़ी ने पीछे से चढ़ाई करके हमला करने की योजना बनाई। जिस वक्त ऊपर जंग में मौजूद दुश्मन को अंदेशा हुआ कि भारतीय सिपाही पीछे से चढ़ाई करके हमला करने को तैयार हैं, तो उनके होश ही उड़ गए क्योंकि उन्होंने लगभग सारा डिफेंस और अटैक का असलहा तो आगे की तरफ़ लगा दिया था। 14 घंटे की चढ़ाई के बाद तकरीबन 500 मीटर की दूरी रह गई थी जब हमारे सिपाहियों पर गोलियों की बौछार होने लगी, लेकिन गोरखा जिस बहादुरी के लिए मशहूर हैं उसका आह्वान करते हुए गोलियों के बीच आगे बढ़ते रहे। मैं सोचता हूं कि ऊपर मौजूद जो लोग हमारे सिपाहियों पर गोलियां चला रहे थे उनके लिए ये सब किस स्तर तक आश्चर्यचकित करने वाला रहा होगा। इतनी मुश्किल चढ़ाई, ताबड़तोड़ गोलाबारी, उसके बावजूद भारतीय सिपाही रुकने का नाम नहीं ले रहे थे।

परमवीर क्षण

कैप्टन मनोज पांडेय के नेतृत्व वाली टुकड़ी को जानकारी थी की चोटी पर दो पाकिस्तानी बंकर हैं लेकिन ऊपर पहुंच कर उनका ध्यान गया कि मात्र दो नहीं बल्कि छः (6) पाकिस्तानी बंकर मौजूद

हैं। अपने जवानों को चट्टान के पीछे रहने का आदेश दे कर वह अकेले बाहर निकले, तुरंत ही दूसरी तरफ़ से अंधाधुंध गोलियां चलने लगीं। उनको मजबूरन वापस आना पड़ा लेकिन उद्देश्य पूरा हो गया। उन्होंने कौन किस जगह तैनात है देख लिया था। जय महाकाली की! युद्ध गर्जना के साथ कैप्टन मनोज पांडेय और उनके साथी जवान शत्रुओं पर टूट पड़े। दो बंकर ध्वस्त करने के बाद कैप्टन मनोज बुरी तरह घायल हो चुके थे। तीसरे बंकर में उन्होंने अपनी खुखरी (A knife which Gorkha Soldiers Carry) से संघर्ष किया और सभी घुसपैठियों को ढेर कर दिया। चौथा बंकर तबाह करने के मकसद से उन्होंने ग्रेनेड निकाल कर उसकी तरह फेंका। हवा में ग्रेनेड उछालते ही तीन गोलियां उनके माथे पर सीधी आ लगीं, उनके बलिदान के साथ ही चौथा बंकर भी ध्वस्त हो गया। शहादत प्राप्त करते वक्त कैप्टन मनोज पांडेय के आखरी शब्द थे "ना छोड़नो" यह नेपाली का वाक्य है जिसका अर्थ होता है "किसी को मत छोड़ना"।

परम वीर चक्र

कारगिल वार हीरो के नाम से प्रसिद्ध अमर शहीद कैप्टन मनोज कुमार पांडेय भारत के तमाम युवाओं के लिए हमेशा प्रेरणा का स्रोत रहेंगे। उनकी इस वीरता के लिए उन्हें, परमवीर चक्र से नवाज़ा गया जो उनकी बचपन की ख्वाहिश थी। हम उनके हौसले को सलाम करते हुए कारगिल युद्ध में शहीद हुए भारत के सभी वीर जवानों को विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

कार्तिकेय मिश्र
इतिहास विभाग, प्रथम वर्ष

क्या प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत आर्थिक ठहराव का काल था?

प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत का समय गतिशील परिवर्तनों का समय था जो सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में हो रहा था। यह विभिन्न क्षेत्रीय शासक राजवंशों के उद्भव का काल था। इसे विशेष रूप से "विकेंद्रीकरण की अवधि" कहा जा सकता है। गुप्तोत्तर काल में कोई भी केंद्रीय प्राधिकारी शासन नहीं कर रहा था (हालांकि, गुप्त काल एवं मौर्य काल के केंद्रीकरण / विकेंद्रीकरण के स्तर पर काफी वाद- विवाद हुए हैं)। यह सामाजिक गतिशीलता का काल भी था, या दूसरे शब्दों में कहें तो जातियों के प्रसार का काल था । विभिन्न जातियाँ अपने-अपने व्यवसाय के अनुसार उभरीं। उदाहरण के लिए, मुंशी या कायस्थ। ब्राह्मण जातियों में से कई का नाम उनके अनुष्ठान के प्रकार के नाम पर रखा गया था, [1] राजपूत जाति का उदय हुआ और उन्होंने क्षत्रिय जाति का स्थान लिया, इसी तरह, शूद्र वर्ण के कई जाति कृषक बन गए ।[2] भूमि अनुदान देने के कारण नए क्षेत्र खेती के अंतर्गत आए। आर्थिक क्षेत्र में इतिहासकारों के बीच काफी तर्क - वितर्क रहे है। डी.डी. कोसंबी, प्रो. आर.एस. शर्मा, बी.एन.एस. यादव, बी.पी. साहू, और डी. एन. झा जैसे दिग्गजों ने अर्थव्यवस्था में गिरावट के लिए तर्क दिया। डी.डी. कोसंबी पहले इतिहासकार थे जो भारत में सामंतवाद के विचार के साथ आए।

प्रो. आर.एस. शर्मा ने अपनी पुस्तक 'भारतीय सामंतवाद' लिखी जिसमें उन्होंने पहली बार भारतीय सामंतवाद के सभी पक्षों का सांगोपांग विवेचन प्रस्तुत किया और उस विचार को आगे बढ़ाया। उनके लिए गुप्तोत्तर काल की अवधि आर्थिक ठहराव की अवधि थी, जिसमें लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आई। शहरी बस्तियां ह्रासित हो गईं और एक आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था उभरी। विभिन्न विद्वानों जैसे बी.डी. चट्टोपाध्याय, आंद्रे विंक, हरमन कुलके और बर्टन स्टीन ने सामंतवाद के इस सिद्धांत को नकार दिया। वे वैकल्पिक राज शासन जैसे अखंडित हुकूमत (इंटीग्रेटिव पॉलिटी) या खंडीय अवस्था का राजतंत्र (सेगमेंटरी स्टेट पॉलिटी) के साथ आए।

ऊपर के अनुच्छेद में सामंतवाद के विभिन्न क्षेत्रों में बदलाव का संक्षिप्त विवरण था। मैं अब इस काल की आर्थिक परिस्थितियों का अनुसंधान करना चाहूंगा। प्रो. आर. एस. शर्मा ने पहली बार आर्थिक तंगी के बारे में बात की। उन्होंने संख्यात्मक प्रमाण, यात्रियों के साहित्यिक खातों जैसे ह्वेन त्सांग, कुछ पुराने शहरी बस्तियों के पुरातात्विक साक्ष्य का इस्तेमाल किया और निष्कर्ष निकाला कि यह अवधि आर्थिक ठहराव की थी। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि गुप्तोत्तर काल में रोमन साम्राज्य के साथ लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आई।[3] उन्होंने सिक्के की कमी के महत्वपूर्ण बिंदु को भी उठाया और इसे आर्थिक ठहराव के अपने सिद्धांत के प्रमाण के रूप में लिया। सात वाहनों और अन्य राजवंशों द्वारा भारी मात्रा में कार्षापण सिक्कों को दान करने की प्रथा प्रारंभिक मध्यकालीन समय में ही समाप्त हो गई थी। अब अधिक जोर पवित्र स्थानों और अनुष्ठानों में जाने पर था। यह सिक्कों की अल्पता से जुड़ा हो सकता है।[4] उन्होंने विदेशी यात्रियों के साहित्यिक स्रोतों और पुरातात्विक साक्ष्यों का इस्तेमाल किया और पाया कि शहरी बस्तियों का क्षय हुआ, जैसे कि - पुराना किला, मथुरा, हस्तिनापुर, श्रावस्ती, कौशांबी, राजघाट, चिरांद, वैशाली, पाटलिपुत्र गुप्त काल में क्षीण होने लगे और ज्यादातर गुप्तोत्तर काल में गायब हो गए।[5] प्रो. शर्मा के इन सभी तर्कों को स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। आमतौर पर यह माना जाता है कि कुषाण काल के बाद, भारत ने "डी-अर्बनाईजेशन" (शहरों से गांव की ओर पलायन) के एक चरण में प्रवेश किया और लगभग सभी प्रारंभिक शहरी केंद्रो का गुप्त काल या गुप्तोत्तर काल में पतन हो गया या वह विलुप्त हो गए।[6]

प्रो. शर्मा ने सिक्कों की कमी के साथ शुरुआत की। सिक्के ने व्यापार में बहुत योगदान दिया और कर- निर्धारण की प्रणाली को प्रभावित किया। इसमें कोई संदेह नहीं है कि बड़ी संख्या में मौर्य और मौर्योत्तर काल के सिक्कों के निशान हैं। कुषाणों ने बड़ी संख्या में तांबे के सिक्कों का खनन किया। धातु के पैसे की प्रचुरता 200 ई.पू.- 300 ईस्वी में शिल्प उत्पादन, लंबी दूरी के व्यापार और शहरीकरण में वृद्धि के साथ एकदम सही बैठता है। यद्यपि गुप्त शासकों ने

सोने के सिक्कों की सबसे बड़ी संख्या जारी की, लेकिन उनकी स्वर्ण सामग्री, विशेष रूप से स्कंदगुप्त के शासनकाल में, कुषान द्वारा जारी किए गए सिक्कों से कम थी।[7]

कुषाण काल के सिक्के

दूसरा बिंदु जो प्रो. शर्मा ने उठाया वह शहरी केंद्रों की गिरावट है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उन्होंने अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए पुरातात्विक साक्ष्य और साहित्यिक साक्ष्य दिए कि प्रारंभिक मध्ययुगीन काल में प्रमुख शहरी केंद्रों में गिरावट आई थी। पहले उत्तर भारत का इतिहास भारत का इतिहास माना जाता था। यह अपने आप में अत्यधिक समस्याग्रस्त था क्योंकि पूर्वी और पश्चिमी भारत का उत्तरी भारत की तुलना में अलग अनुभव था। भारतीय सामंतवाद का सिद्धांत उत्तर भारत के अनुभव पर आधारित था। जैसा कि पहले बताया गया है, उपमहाद्वीप में, विशेष रूप से उत्तर भारत में, शहरी केंद्रों के पतन का अनुभव हुआ। लेकिन बी.डी. चट्टोपाध्याय जैसे विद्वान का मानना था कि गुप्त काल या गुप्तोत्तर काल में शहरी केंद्रों या शहरी अर्थव्यवस्था का पतन नहीं हुआ था। पृथुदक या आधुनिक पेहवा, से मेले की उपस्थिति के कुछ प्रमाण मिले हैं।[8] चट्टोपाध्याय ने इसे एक निगम के रूप में वर्गीकृत किया है। उनके लिए दूसरी बस्ती थी तत्तानंदपुरा (बुलंदशहर के पास अहार के रूप में पहचाना गया) था। उन्होंने इसके प्रत्यय "पुरा" पर ध्यान केंद्रित किया जो किसी प्रकार के शहरी केंद्र को दर्शाता है।[9] झांसी के पास सियादोनी, और गोपगिरी (ग्वालियर) भी शहरी केंद्र थे।[10]उपर्युक्त साक्ष्य का उपयोग करते हुए चट्टोपाध्याय ने प्रो. शर्मा के शहरी पतन के सिद्धांत की आलोचना की और तर्क दिया कि पुरानी बस्तियाँ घट सकती हैं लेकिन बाद में नए शहरी केंद्रों ने उनका स्थान लिया । यहां, हमें प्रो. शर्मा के बुनियादी आधार को देखना होगा। उन्होंने शहरों के पतन के तीन चरणों का वर्णन किया- पहला 300 ईस्वी - 500 ईस्वी, दूसरा 500 ईस्वी - 1000 ईस्वी, तीसरा 1000-1200 ईस्वी।[11] तीसरे चरण को शहरी अर्थव्यवस्था के पुनरुद्धार का काल माना जाता था। इन बस्तियों को शहरी केंद्रों के रूप में चिह्नित करने में चट्टोपाध्याय द्वारा उपयोग किए गए अधिकांश सबूत 9 वीं -10 वीं शताब्दी से संबंधित थे। अधिकांश अन्य अध्ययन भी नौवीं शताब्दी के शहरी केंद्रों से संबंधित थे। जबकि प्रो. शर्मा ने 400 ईस्वी से 800 ईस्वी के दौरान शहरी क्षय के बारे में बात की थी। यहां तक कि एक स्थान पर, चट्टोपाध्याय ने खुद कहा कि बस्तियां, जो प्रारंभिक ऐतिहासिक काल से निरंतरता दिखाती हैं, वे प्रारंभिक मध्यकाल के दौरान खराब संरचना का प्रमाण देती हैं।[12] इसके अतिरिक्त, यही शहरी क्षय या पतन का अर्थ है।

पूर्वी भारत में, पाल कालीन लम्बे शासन में मुद्रा की कमी एक पेचीदा समस्या मानी जाती है।[13] बंगाल की सभी प्रमुख बस्तियां प्रारंभिक ऐतिहासिक काल से विशाल तटीय या आंतरिक इलाकों के साथ जुड़ी थी एवं अधिकृत थी।[14] निहाररंजन रे का विचार था कि प्राकृतिक अर्थव्यवस्था ने पाल और सेना शासन के दौरान बंगाल के जीवन को वर्णित किया। हालांकि, मुद्रा की अनुपस्थिति व्यापार और औद्योगिक उत्पादन में अवनति के कारण होगी, जिसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में लोगों की निर्भरता भूमि पर थी। [15] दक्षिण-पूर्व बंगाल की स्थिति बंगाल के अन्य

हिस्सों से काफी अलग थी। मैनमती-लालमई पहाड़ियों में विभिन्न स्तरों के कुल 350 सिक्कों की खुदाई की हुई है। कुछ विद्वानों ने यह दिखाने की कोशिश की कि दक्षिण पूर्व बंगाल और दक्षिण पश्चिम बंगाल की स्थिति काफी भिन्न थी। मध्ययुगीन काल के दौरान, दक्षिण पश्चिम बंगाल में सेना और पाल वंश के शासन के समय सिक्के जारी नहीं किए गए क्योंकि मानक मुद्रा की कोई आवश्यकता नहीं थी। पश्चिमी दुनिया के साथ लंबी दूरी के व्यापार का पतन हो गया था; व्यापार और शहरी केंद्रों का भी पतन हुआ जिसके कारण मानक मुद्रा की कोई आवश्यकता नहीं थी। उसी समय, दक्षिण-पूर्व बंगाल अरब दुनिया के साथ लंबी दूरी का व्यापार कर रहा था। उत्तर और उत्तर पश्चिम बंगाल के शहरी केंद्रों ने अपनी आर्थिक व्यवहार्यता खो दी थी। हालाँकि, हम केवल 350 सिक्कों के निष्कर्षों के आधार पर कोई ठोस टिप्पणी नहीं कर सकते हैं; वह भी 800 से अधिक वर्षों तक फैला है। 12 वीं शताब्दी के बाद के काल के शुरुआती दौर में चीन-बंगाल व्यापार भी रुक गया था। डी. सी. सिरकार, लल्लनजी गोपाल जैसे विद्वानों ने भी इस बात को स्वीकार किया। बंगाल के हर हिस्से में स्थिति समान नहीं थी। पश्चिमी बंगाल के संदर्भ में, प्रारंभिक मध्ययुगीन काल शहरीकरण का वास्तविक चरण था। सामंतीकरण में क्षेत्रीय विविधताएँ थीं। बंगाल के चंद्रकेतुगढ़ ने सुधार के कुछ संकेत दिखाए थे। ऐसा ही नजारा राजबाड़ीदंगा (जिला मुर्शिदाबाद) में दिखाई दे रहा है। यह खुद को एक शहरी केंद्र के रूप में ढाल रहा था। संबंधित अवधि के दौरान, चांदी का सिक्का नोआखाली और चित्तागोंग तटीय मैदानों में गहन उपयोग में था। [16]

पूर्वी भारत कुछ प्रकार के शहरी क्षय से गुजरा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुछ नए शहरी केंद्र उभरे और दक्षिण-पूर्व बंगाल ने एक अलग तरह की स्थिति प्रदर्शित की। हालाँकि, जिस चीज़ पर ध्यान देने की ज़रूरत है, वह शहरी केंद्र की प्रकृति है। मध्ययुगीन काल के दौरान उभरे केंद्रों का प्रकृति में धार्मिक महत्व था, जबकि शहरी क्षेत्र जो गिरावट में थे, वे प्रकृति में व्यापारिक केंद्र थे। बंगाल के चार शहरी केंद्र- खाना मिहिरेर धिपी, राजबाड़ीदंगा, गोस्वामीखंड और बानागढ़ सामंती परिवेश में संपन्न गैर-वाणिज्यिक शहरी केंद्रों के विशिष्ट उदाहरण हैं। [17] जहां तक पश्चिमी भारत का संबंध है, ए.के. फोर्ब्स का मानना था कि ग्यारहवीं-तेरहवीं शताब्दी के दौरान गुजरात अपने समृद्ध व्यापार और वाणिज्य के कारण काफी संपन्न था। उनकी धारणा गुजरात के चालुक्य की बस्तियों में पुरा, पुरी या नगर जैसे प्रत्यय पर आधारित थी। विदेशी खाते, विदेशी व्यापार की प्रवृत्ति का पता लगाने में बहुत मदद करते हैं। [18] मुस्लिम भूगोलवेत्ताओं और सुलेमान, अबू जैद, अल-बिलादुरी, अल-मसुदी, इब्न हौकाल, अल-बरुनी और इब्न बतूता जैसे यात्रियों ने मौजूदा बंदरगाहों, कस्बों और स्थानीय उत्पादों, व्यापार की वस्तुओं, समुद्री मार्ग और भूमि मार्ग पर बहुमूल्य प्रकाश डाला। हालांकि टंकण आकार में छोटे और ज्यादातर आधारच्युत चांदी के थे, ऐसा लगता था कि इस अवधि की मुद्रा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण और अभिन्न अंग बन गए।[19]

प्रारंभिक मध्यकाल के दौरान उत्तर भारत में व्यापारिक क्षेत्र में स्थानीय विनिमय केंद्रों का उदय हुआ।[20] कुछ विद्वानों ने हाट और मंडपिकों का उल्लेख किया है। यह माना जाता था कि नियमित आदान-प्रदान के लिए यह एक तरह का मेला या साप्ताहिक बाजार है। गोपगिरि, तत्तनंदपुरा, सियादोनी, सभी या तो हाट या मंडपिका थे। उनमें से प्रत्येक के पास विभिन्न प्रकार के बाजार थे। उदाहरण के लिए, पृथुदका घोड़ा व्यापार के लिए प्रसिद्ध था। जहां तक व्यापारिक गतिविधियों का सवाल है, चट्टोपाध्याय ने इस अवधि के विभिन्न व्यापारी श्रेणी का उल्लेख किया है। गोपीगिरी में तेल के कारखानों के मुखिया का दो हाट से संबंध का उल्लेख किया गया था। प्रत्येक श्रेणी के प्रमुख को महात्मा के नाम से जाना जाता था। यहां दिलचस्प बात यह है कि सामंती सिद्धांत के समर्थक भी स्थानीय विनिमय केंद्रों या हाटों की उपस्थिति की उपेक्षा नहीं कर रहे हैं। [21] लेकिन इन स्थानीय केंद्रों के अस्तित्व को जीवंत व्यापार या समृद्ध शहरी अर्थव्यवस्था के पर्याय के रूप में नहीं लिया जा सकता है। चट्टोपाध्याय ने तत्तनंदपुरा, सियादोनी और गोपगिरी में प्रारंभिक ऐतिहासिक समय के सात महत्वपूर्ण श्रेणियों की उपस्थिति का उल्लेख किया। वो थे सुनार, पत्थर के राजमिस्त्री, ठठेरा, कोल्हू से तेल निकालने वाले, माला बनाने वाले, कुम्हार।[22] एक बिंदु जिसे बाहर निकालने की आवश्यकता है कि कुछ विशेष बस्तियों में श्रेणियों की उपस्थिति का

मतलब यह नहीं था कि व्यापारिक अर्थव्यवस्था समृद्ध थी। जब तक हमारे पास उनके काम की तीव्रता का कोई मात्रात्मक विश्लेषण नहीं होगा, तब तक हम किसी निष्कर्ष पर नहीं आ सकते।

लंबी दूरी के व्यापार और शहरीकरण के साथ इनके संबंध के बारे में क्या प्रो. शर्मा और चट्टोपाध्याय यहां फिर से एक-दूसरे के सामने हैं। प्रो. शर्मा का मानना था कि पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन के बाद लंबी दूरी के व्यापार का पतन हुआ। गुप्तोत्तर काल के बाद के भारतीय उपमहाद्वीप से रोम के सिक्कों का गायब होना इसी बात की ओर संकेत करता है। तीसरी शताब्दी ईस्वी तक रोमन साम्राज्य के पश्चिमी भाग के साथ व्यापार में गिरावट आई और ईरान और बाइज़ेंटाइन के साथ रेशम व्यापार छठी शताब्दी ईस्वी के मध्य तक बंद हो गया।[23] चीन और दक्षिण पूर्व एशिया के साथ व्यापार की स्थिति कुछ हद तक बनी रही लेकिन इसका लाभ अरब के मध्यम व्यापारियों द्वारा लिया गया । दूसरी ओर, चट्टोपाध्याय ने लंबी दूरी के व्यापार की भूमिका को कम कर दिया। उन्होंने खुद स्वीकार किया कि पश्चिमी रोमन समाज के साथ लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आई, लेकिन उन्होंने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि रोमन सिक्कों के ढेर पहली शताब्दी के बाद के नहीं थे। [24] इसमें कोई शक नहीं कि गुप्तोत्तर काल के दौरान भारत अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में एक गंभीर दावेदार नहीं था, लेकिन यह पूर्व-गुप्त चरण के दौरान भी नहीं था। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लंबी दूरी के व्यापार का आंतरिक व्यापार से कोई लेना-देना नहीं था और लंबी दूरी के व्यापार का पतन आंतरिक व्यापार और लघु वस्तु उत्पादन के पतन की ओर संकेत नहीं करता है। [25] फिर भी, हमारे पास कुछ ऐसे सबूत हैं जिनसे पता चलता है कि भारत लंबी दूरी के व्यापार में एक बड़ा दावेदार था। "पेरिप्लस ऑफ एरीथ्रियन सी" और "सिल्क रोड (रेशम मार्ग)" के अस्तित्व से पता चलता है कि भारत लंबी दूरी के व्यापार में शामिल था। कुषाण शासकों ने भी रेशम मार्ग के हिस्से को नियंत्रित किया। छठी शताब्दी ईस्वी से दसवीं शताब्दी ईस्वी तक व्यापार के पतन को भी शून्य और दशमलव प्रणाली की उपेक्षा से जोड़ा गया था।

प्रारंभिक मध्ययुगीन बंगाल में व्यापारिक प्रथाओं की दो अलग कहानी थी। एक दक्षिणपूर्वी बंगाल में और दूसरा इसका बचा हुआ भाग। पाल और सेना शासन की लंबी अवधि के दौरान धातु मुद्रा का अभाव था और यह अनुपस्थिति औद्योगिक उत्पादन में पतन के साथ थी। [26] इससे शहरी केंद्रों से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर कारीगरों का प्रवास हुआ। भूमि पर निर्भरता काफी बढ़ गई। बंगाल में मंदिरों की ईंटों पर नावों का चित्रण किया गया है। [27]अधिकांश मंदिरों को नदी के व्यापार से जुड़े क्षेत्रों में बनाया गया था और वह एक नए मध्यम वर्ग के उदय से संबंधित था। चौथी-पांचवीं शताब्दी के ताम्रपत्र चार्टर कई व्यावसायिक समूहों के संघ को संदर्भित करते हैं जैसे कि मुख्य कारीगर (प्रथम कुलिका), मुख्य मुंशी (प्रथम कायस्थ), कारवाहक (सार्थक) और मुख्य व्यापारी (नगर श्रेष्ठी)। [28] भावदेव की आठवीं शताब्दी के एक शिलालेख में कहा गया है कि उनका महल एक ऊंची पहाड़ी पर था, जिसका आधार एक नदी द्वारा धोया गया था जहाँ हाथी नहाते थे और नौकाएँ आगे-पीछे होती थीं। चंद्रकेतुगढ़ और महास्थनगढ़ 10 वीं शताब्दी ईस्वी तक बंगाल व्यापार संजाल के बड़े खाड़ी में शामिल होने का उदाहरण हैं।[29] विभिन्न अब्बासिद खलीफ़ाओं के सिक्के से पता चलता है कि दक्षिण-पूर्व बंगाल का अरब दुनिया के साथ निरंतर समुद्री व्यापार था।[30] तराफ़दार ने यह भी तर्क दिया कि हमें वस्तु उत्पादन की निरंतरता, शहरी केंद्रों और समुद्री व्यापार के अस्तित्व को बनाए रखना है। उनकी सभी दलीलें निश्चित रूप से उनकी अपनी व्याख्याओं पर आधारित हैं, जो कि बिना किसी सबूत के इसे पुष्ट करने के लिए संभव नहीं है। विद्वानों का मानना था कि प्रारंभिक मध्ययुगीन दक्षिण बंगाल में चीन के साथ निरंतर और संपन्न व्यापार था। लेकिन चीनी वस्तुओं और सिक्कों की अनुपस्थिति इस धारणा के लिए एक बड़ा झटका है। इस व्यापार की सीमित प्रकृति इस तथ्य से स्पष्ट हुई कि तंजौर में लगभग पूरे सूंग काल का प्रतिनिधित्व करने वाले केवल 15 सिक्के ही खोजे गए हैं। [31] पूर्वी भारत, विशेष रूप से बंगाल में, व्यापारिक अभ्यास बहुत स्पष्ट नहीं है। अभी तक एकत्र किए गए साक्ष्य एक लंबी दूरी के व्यापार या व्यापारिक प्रथाओं का दावा करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। फिर भी, व्यापारी क्षेत्र में मौजूद थे लेकिन संभवतः, वे अंतर-महाद्वीपीय व्यापार में शामिल नहीं थे। उत्पादित वस्तुएं ज्यादातर स्थानीय विनिमय केंद्रों के लिए थे। शहरी क्षेत्रों से ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवास के संदर्भ भी व्यापार और शहरी केंद्रों के पतन की ओर संकेत करते हैं।

पश्चिमी भारत में, आवधिक बाजारों की छोटी दुकानें थी, जहां स्थानीय उत्पादक अपने अधिशेष उत्पाद बेचने के लिए लाते थे, उससे वाणिज्य केंद्र का गठन हुआ। कम्बौली और फुलसरा के गाँवों में जमीन के दान का उल्लेख करने के अलावा, टिमाना अनुदान (ई.स. 1207) हमें इन गांवों में प्रत्येक दुकान से सालाना एक नाटक का अनुदान बताता है। परमारा प्रमुख यसोवर्मन के कलवन ताम्रपत्रों में औद्राहदी विसया के गांवों में स्थित चौदह बनिया दुकानों का उल्लेख है। "नादियाका" या "अनादियक" शायद गांव में एक ऐसी जगह थी जहां स्थानीय उत्पादक अपने अधिशेष उत्पाद बेचने या विनिमय करने के लिए लाते थे। कस्बों के बाजार स्वाभाविक रूप से महान वाणिज्य के केंद्र थे। शहर का सामान्य संगठन और खाका अनहिलवाड़ा की योजना जैसा लगता है और इसका उल्लेख जिनमंदाना के कुमारपालचारिता में किया गया है। इसके हिसाब से वहां चौरासी बाज़ार थे, प्रत्येक विशेषज्ञता वाले अलग-अलग जिंस थे। सुनार, कारीगर, चिकित्सक और नाविक अलग-अलग क्षेत्रों में अधिवासित थे। सर्राफ या मुद्रा परिवर्तक के संदर्भ से पता चलता है कि विभिन्न शहरों के व्यापारी अपने पैसे को स्थानीय मुद्रा में परिवर्तित कर सकते थे। दसवीं शताब्दी के सियाडोनी शिलालेख में, हमारे पास दोशिहट्टा (कपड़ा बाजार), प्रसन्नाहट्टा (शराब बाजार), महाटाहकट्टा (मुख्य बाजार) आदि का जिक्र है। बड़े मंदिर भी, महत्वपूर्ण धार्मिक त्योहारों और मेलों के लिए एक स्थान होने के अलावा, एक ऐसी जगह के रूप में इस्तेमाल किए जाते थे जहाँ तीर्थयात्री दैनिक उपयोग के आवश्यक सामान खरीद सकते हैं।पश्चिमी भारत के विदेश व्यापार को फारस की खाड़ी से दक्षिण चीन सागर तक समुद्री गतिविधि की लंबी श्रृंखला में एक कड़ी के रूप में देखा जाना चाहिए। भारतीय खाते संबंधित अवधि के विदेशी व्यापार की जानकारी के लिए लगभग नगण्य हैं। कुछ खाते उपलब्ध हैं, लेकिन उनके पास अरब और चीनी खातों की तुलना में वाणिज्यिक तथ्यों की कमी है। भारतीय खातों में इस लापरवाही से पता चलता है कि भारतीयों ने व्यापार में द्वितीयक भूमिकाएं हासिल कर ली थी। वे कमोबेश तटीय व्यापार तक ही सीमित थे।[32]

कृषि क्षेत्र में कृषि परिदृश्य का व्यापक विस्तार हुआ। इसमें कोई संदेह नहीं है, भूमि अनुदान की प्रक्रिया के माध्यम से नए क्षेत्रों को खेती के तहत लाया गया था। शहरी जीवन की गिरावट के बाद, कई व्यापारियों और कारीगरों ने ग्रामीण क्षेत्रों की ओर पलायन किया और कृषक के रूप में काम करने लगे। [33] ऐसा लगता है कि अरघट्टा, एक प्रकार का पूर्व-फ़ारसी पहिया है, जो पहली बार सातवीं शताब्दी में दिखाई दिया था। यह अवधि निस्संदेह कृषि विस्तार की बड़ी उपज का काल रही थी। कंबन के "कृषिप्रसार" और 'एरेलुपटू' जैसे पाठ कृषि के विस्तार की प्रकृति को दर्शाते हैं क्योंकि दोनों पाठ परिधीय क्षेत्रों में रचे गए थे। कृषिप्रसार का संबंध उत्तर भारत से है और एरेलुपटू का दक्षिण भारत से। वराहमिहिर की पुस्तक बृहत्संहिता, अग्नि पुराण और विष्णुधर्मोत्तर पुराण में कृषि से जुड़े निर्देशों के बारे में बात की गई थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के साथ इन ग्रंथों की तुलना से पता चलता है कि बीज, तीन फसल प्रणाली और सिंचाई में काफी महत्वपूर्ण प्रगति हुई थी। इस बात पर काफी बहस हुई कि क्या अरघट्टा में वह तंत्र था जो फ़ारसी पहिए में था। इरफान हबीब का विचार है कि अरघट्टा का उपयोग सतह से पानी खींचने के लिए किया गया था और इसमें पूर्व-फारसी पहिया प्रौद्योगिकी थी। डबोक से मिले शिलालेख (c.644 A.D.) ने सुझाव दिया कि कृत्रिम सिंचाई ने दोहरी फसल प्रणाली की सुविधा प्रदान की है।[34]

पूर्वी भारत में कृषि का परिदृश्य उपमहाद्वीप के अन्य भागों जैसा ही था। पूर्वी भारत में भी जबरदस्त कृषि विस्तार देखा गया। ब्राह्मण धार्मिक केंद्रों को भूमिदान देकर कृषि विस्तार की प्रकिया को आगे बढ़ाया गया। भास्करवर्मन के निधानपुर ताम्रपत्र शिलालेख में उनके महान दादा, भूतिवर्मन द्वारा जारी मूल अनुदान का उल्लेख है, भूमि के एक बड़े पथ का दान दर्ज किया गया, मयूरसालमला ने "ब्राह्मणों की मण्डली" के लिए "भुमि-छिद्र- न्याय" के सिद्धांत का उल्लेख किया। आगे रिकॉर्ड से पता चलता है कि भूमि को कराधान से मुक्त किया गया था। दान की गई भूमि को किसी भी तरफ बसे हुए कृषि प्रणाली से नहीं जोड़ा गया था। यह इंगित करता है कि जिस इलाके में यह अग्रहार बनाया गया था, वह मूल रूप से एक वन क्षेत्र में था और इससे वन विनाश का खतरा था।

निधानपुर ताम्रपत्र शिलालेख

मंदिर सहित एक बड़ी ब्राह्मणवादी बस्ती को राज्य द्वारा वनाच्छादित स्थान पर लगाया गया था। इससे पता चलता है कि मंदिरों को एक वनस्थली में एकीकरण के नाभिक के रूप में स्थापित किया गया था जिसे एक अग्रहार के रूप में दिया गया था। कुछ विद्वानों ने तर्क दिया कि मंदिर आदिवासी आबादी को ब्राह्मणी गुना में नियुक्त करने में सफल रहे और उन्हें कर भरना सिखाया गया। इस तरह, शासक और राज्य का कर आधार बढ़ गया था। चंद्र राजवंश ने विभिन्न प्रकार की आयतों के लिए भूमि अनुदान अभिलेख/अंकित करने वाले कई ताम्रपत्र शिलालेख जारी किए। पश्चिमभागा ताम्रपत्र को सिल्हर जिले के विभाजन में खोजा गया था। दोनों, निधानपुरा और पश्चिमभागा ताम्रपत्र, ब्राह्मणों और ब्राह्मण संस्था की एक मण्डली के लिए भूमि के एक बड़े पथ के दान के माध्यम से एक जंगल के राज्य प्रायोजित उपनिवेशण से संबंधित हैं, जो मुख्य रूप से गैर-संस्कृत क्षेत्र है। चन्द्र वंश बौद्ध धर्म में विश्वास रखता था लेकिन फिर भी भारी संख्या में ब्राह्मणों का संरक्षण करता था। इन सभी सबूतों से पता चलता है कि पूर्वी भारत में कृषि विस्तार बड़ी मात्रा में था।

जहाँ तक पश्चिमी भारत का संबंध है, समकालीन साहित्य एवं लेख स्थानीय उत्पादन में अधिशेष को दर्शाते हैं जो अधिक भूमि उपयोग, बेहतर कृषि ज्ञान, और पश्चिमी भारत के क्षेत्र में सिंचाई के बेहतर साधन के कारण था। [35]बड़ी संख्या में दैनिक उपभोग का सामान व्यापार के लिए उपलब्ध था जैसे खाद्यान्न, चीनी, तेल, वस्त्र इत्यादि। भूमि का अधिक से अधिक उपयोग विभिन्न अनुदानों में परिलक्षित होता है, जो दान की गई भूमि की सीमाओं को निर्दिष्ट करते हैं। लेखापद्धति दर्शाता है कि नए क्षेत्रों को खेती के तहत लाया गया था। कन्नौज और गौड़ा (बंगाल) से बड़ी संख्या में ब्राह्मणों के आव्रजन ने पश्चिमी भारत में कृषि के प्रसार को जानने में मदद की होगी। उपमहाद्वीप के अन्य हिस्सों की तरह पश्चिमी भारत में भी कृषि विस्तार में बड़ी तेजी देखी गई।

निष्कर्ष

जैसा कि हमने देखा है, प्रारंभिक मध्ययुगीन काल महान आर्थिक जटिलता का काल था। बहुत ठोस बिंदु तक पहुंचना बहुत आसान नहीं है। यह तर्क कि प्रो. आर.एस. शर्मा ने चार दशक पहले काम किया था, आज आंशिक रूप से खारिज हो गया। फिर भी हम उनके सभी खोज और निष्कर्षों की उपेक्षा नहीं कर सकते जो उन्होंने किए। जहां तक शहरीकरण की प्रक्रिया का सवाल है, चट्टोपाध्याय ने प्रो. शर्मा के आर्थिक ठहराव के सिद्धांत को पूरी तरह से खारिज कर दिया था, लेकिन उन्होंने जिन स्रोतों का इस्तेमाल किया, वे 9वीं शताब्दी के बाद के काल के थे,

जबकि आर्थिक ठहराव या गिरावट की अवधि 4थी -6ठी शताब्दी ईस्वी सन् की थी। फिर भी, चौथी-छठी शताब्दी ईस्वी के दौरान शहरीकरण पर कोई अध्ययन नहीं हुआ है।

हम आर्थिक शुरुआती मध्ययुगीन भारत को आर्थिक तंगी की अवधि नहीं मान सकते क्योंकि कृषि क्षेत्रों में भारी उछाल था। व्यापारिक गतिविधियां स्थानीय विनिमय केंद्रों के रूप में मौजूद थीं। हम कह सकते हैं कि अर्थव्यवस्था फिर से कृषि उत्पादों पर निर्भर थी। कोई संदेह नहीं है कि लंबी दूरी के व्यापार में गिरावट आई और साथ ही साथ टंकण का भी पतन हुआ। लंबी दूरी के व्यापार के लिए गढ़ैया के सिक्के या चांदी की धूल संभव नहीं है। इन दोनों का आंतरिक व्यापार में सबसे अच्छा उपयोग कर सकते हैं। कौड़ियों का ज्यादा मूल्य नहीं है। रोमन साम्राज्य के साथ व्यापार का पतन हुआ और व्यापार पूरी तरह से तिरोहित हो गया। शुरुआती शहरी केंद्रों का भी पतन हुआ लेकिन कुछ विद्वानों ने विभिन्न शहरों के नाम प्रदान करके इसका मुकाबला किया। हालाँकि, एक बात, जिसे हमें ध्यान में रखना है, वह है शहर या बसावट की प्रकृति। प्रारंभिक मध्ययुगीन काल में उभरने वाली बस्तियाँ प्रकृति में विशुद्ध रूप से व्यावसायिक नहीं थीं। हम इस अवधि को आर्थिक ठहराव की अवधि नहीं कह सकते लेकिन यह निश्चित रूप से सीमित शहरी अर्थव्यवस्था का काल था। ठहराव कुछ एशियाई मोड ऑफ़ प्रोडक्शन की अवधारणा के बराबर है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में कोई बदलाव नहीं हुआ था। फिर भी, शहरी विकास की तीव्रता की अवधि में स्पष्ट रूप से गिरावट आई।

---

1. शर्मा, राम शरण, 2001, आरंभिक मध्यकालीन भारतीय समाज: एक अध्ययन सामंतीकरण, हैदराबाद ओरिएंट लोंगमैन, पृष्ठ. 204
2. उक्त, पृष्ठ. 206
3. शर्मा, राम शरण, 2001, अर्ली मेडीवल इंडियन सोसाइटी: ए स्टडी इन फ्यूडलीज़ेशन , हैदराबाद ओरिएंट लॉन्गमैन, पृष्ठ. 13
4. उक्त, पृष्ठ. 40
5. उक्त, पृष्ठ. 28
6. ठाकुर, वी. के. , ट्रेड एंड टाउनज़ इन अर्ली मेडीवल बंगाल, जर्नल ऑफ़ द इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ़ द ओरिएंट, वॉल्यूम XXX, पृष्ठ. 207
7. शर्मा, राम शरण, 2001, अर्ली मेडीवल इंडियन सोसाइटी: ए स्टडी इन फिउडलीज़ेशन, हैदराबाद ओरिएंट लोंगमैन, पृष्ठ. 123
8. चट्टोपाध्याय, बी.डी., [1994] 2012, द मेकिंग ऑफ़ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, पृष्ठ.137
9. उक्त, पृष्ठ. 139
10. उक्त, पृष्ठ. 140-2
11. शर्मा, राम शरण, 1965, भारतीय सामंतवाद, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड
12. चट्टोपाध्याय, बी.डी., [1994] 2012, द मेकिंग ऑफ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, पृष्ठ. 156
13. तराफदार, एम. आर. , 1995, व्यापार, प्रौद्योगिकी, सोसायटी इन मेडीवल बंगाल, ढाका, यूनिवर्सिटी प्रेस लिमिटेड, पृष्ठ 12
14. रे, हिमांशु प्रभा, 'बंगाल का पुरातत्व: ट्रेडिंग नेटवर्क, सांस्कृतिक पहचान '
15. तराफदार, एम. आर. , 1995, व्यापार, प्रौद्योगिकी, सोसायटी इन मेडीवल बंगाल, ढाका, यूनिवर्सिटी प्रेस लिमिटेड, पृष्ठ 12
16. प्रसाद, बीरेंद्र नाथ, २०१२, ब्राह्मणवादी मंदिर, मठ, अग्रहार और एक बौद्ध प्रतिष्ठान दो फ्रंटियर स्टेट्स की मार्श और फॉरेस्ट परिधि: प्रारंभिक मध्ययुगीन सुरमा घाटी (सिलहट और चचेर)600 CE- 1100CE ", साउथ एशिया के धर्म, लंदन, Vol.6, नंबर 1, पृष्ठ. 37

17. ठाकुर, वी.के., 'ट्रेड एंड टाउनज़ इन अर्ली मेडीवल बंगाल', जर्नल ऑफ़ इकोनोमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ़ द ओरिएंट, वॉल्यूम। XXX, पृष्ठ. 220
18. जैन, वी.के. , 1990, ट्रेड एंड ट्रेडर्स इन वेस्टर्न इंडिया A.D 100-1300, दिल्ली, मुंशीराम मनोहरलाल, पृष्ठ. 3
19. उक्त, पृष्ठ. 9
20. चट्टोपाध्याय, बी.डी., २०१२, द मेकिंग ऑफ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, पृष्ठ १४३-५०
21. शर्मा, राम शरण, २००१, अर्ली मेडीशियन इंडियन सोसाइटी: ए स्टडी इन फ्यूडलीज़ेशन, हैदराबाद ओरिएंट लोंगमैन, पृष्ठ. १४०
22. चट्टोपाध्याय, बी.डी., [1994] 2012, द मेकिंग ऑफ़ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, पृष्ठ.159
23. शर्मा, राम शरण, 2001, अर्ली मेडीवल इंडियन सोसाइटी: ए स्टडी इन फ्यूडलिसेशन, हैदराबाद ओरिएंट लॉन्गमैन, पृष्ठ. 27
24. चट्टोपाध्याय, बी.डी., [1994] 2012, द मेकिंग ऑफ़ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, पृष्ठ .51
25. उक्त, पृष्ठ. 152-4
26. तराफदार, एम.आर., 1995, व्यापार, प्रौद्योगिकी, सोसायटी इन मेडीवल बंगाल, ढाका, यूनिवर्सिटी प्रेस लिमिटेड, पृष्ठ 12
27. रे, हिमांशु प्रभा, बंगाल का पुरातत्व: ट्रेडिंग नेटवर्क, सांस्कृतिक पहचान ', जर्नल ऑफ द ओरिएंट का आर्थिक और सामाजिक इतिहास, Vol.49, नंबर 1, p.69
28. उक्त, पृष्ठ. 77
29. उक्त, पृष्ठ. 82
30. तरफ़दार, एम. आर.,1995, व्यापार, प्रौद्योगिकी, मध्यकालीन बंगाल में समाज, ढाका, विश्वविद्यालय प्रेस लिमिटेड, पृष्ठ 15
31. ठाकुर, वी.के., बंगाल ट्रेड एंड टाउनज़ इन अर्ली मेडीवल बंगाल ', जर्नल ऑफ़ द इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री ऑफ़ द ओरिएंट, वॉल्यूम XXX, p.202
32. जैन, वी.के. , 1990, पश्चिमी भारत में व्यापार और व्यापारी A.D. 100-1300, दिल्ली, मुंशीराम मनोहरलाल, पृष्ठ. 137- 139
33. शर्मा, राम शरण, २००१, अर्ली मेडिवल इंडियन सोसाइटी: ए स्टडी इन फ्यूडलीज़ेशन, हैदराबाद ओरिएंट लॉन्गमैन, पृष्ठ ३२
34. चट्टोपाध्याय, बी. डी., [1994] 2012, द मेकिंग ऑफ अर्ली मेडीवल इंडिया, दिल्ली, OUP, p.47
35. जैन, वी.के. , 1990, पश्चिमी भारत में व्यापार और व्यापारी A.D. 100-1300, दिल्ली, मुंशीराम मनोहरलाल, p.24

साईं विश्वकर्मा
एम.ए. प्राचीन इतिहास

छठवीं शताब्दि ई.पू. से चौथी शताब्दी ई.पू. के बीच हुए आर्थिक बदलाव

उमा चक्रवर्ती के शब्दों में - "छठी शताब्दी ईसा पूर्व ने मुख्य रूप से भारतीय इतिहास पर अपनी छाप छोड़ी थी, क्योंकि इसने दार्शनिक अटकलों के साथ तीव्र व्यस्तता देखा था"[१] । मैं इसमें कुछ जोड़ूंगा, उस काल में न केवल दार्शनिक अटकलें देखी गईं, बल्कि आर्थिक रूप से तेजी भी आई। शहरी केंद्रों का उदय, विभिन्न शिल्प प्रस्तुतियों की उपस्थिति , सरल सरदारी से एक जटिल राजनीतिक संरचना की ओर परिवर्तन, जो विभिन्न कारकों के कारण तीसरी सदी ईसा पूर्व में मगध के राजशाही मौर्य राज्य में परिणत हुआ। जातक कुछ बाद के काल के माने हैं । मिट्टी के बर्तनों के संदर्भ में, एक महत्वपूर्ण विलासिय असबाब नॉर्दर्न ब्लैक पॉलिश्ड वेयर (NBPW) पाए गए हैं। NBPW मृद्भाण्ड संयोजन छोटा है जो दर्शाता है कि यह एक तरह की विलासिता का असबाब था। NBPW विनिमय और संचार के रूपों में शामिल होने के कारण शहरीकरण से भी जुड़ा हुआ है। [२] जॉर्ज एर्दोसी का यह भी विचार है कि इस युग में जनसंख्या और समुदायों में जबरदस्त वृद्धि देखी गई, लंबी दूरी के व्यापार का फिर से उभरना और मुख्य जलक्षेत्रों से दूर उपजाऊ वन क्षेत्रों में कृषि विस्तार। [३] डी.डी. कोसंबी ने लिखा कि बढ़ती जनसंख्या और व्यापार समाज में बदलाव ला रहे हैं।[४]

नॉर्दर्न ब्लैक पॉलिश्ड वेयर (NBPW)

मौद्रिक लेन-देन आर्थिक समृद्धि का सबसे निश्चित उदाहरण है। 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से सुंभी चिह्नित सिक्के, भारत के सबसे पुराने सिक्को का खनन शुरू हुआ था। इसने व्यापार के विकास में योगदान दिया और फलस्वरूप शहरीकरण को बढ़ावा दिया।[५] तक्षशिला में सुंभी चिह्नित सिक्के बड़ी संख्या में पाए जाते हैं, उनमें से अधिकांश से मगध के राजाओं से संबंधित है। [६] उदाहरण के रूप में एक चिकित्सक, जीवाका, को अपने बेटे को पालने के लिए एक गहापती से १६,००० सिक्के (कहपन) मिले ।[७] इसके और भी कई उदाहरण मिले हैं। के.एम. श्रीमाली का मानना है कि आंकड़े अतिरंजित हो सकते हैं लेकिन यह समाज में मौद्रिक अर्थव्यवस्था की गहरी पैंठ को दर्शाता है। सिक्के की उपस्थिति ने व्यापार की दक्षता को बढ़ाया होगा, हालांकि साहित्यिक सबूत अभी भी दिखाते हैं कि कर और कारीगरों का भुगतान नकद की जगह सामग्री से दिया जाता था। यह इन संदर्भों से और साथ ही पुरातात्विक साक्ष्य से स्पष्ट है, कि वस्तु विनिमय प्रणाली को मौद्रिक विनिमय प्रणाली द्वारा बदल दिया गया था ।

शब्द गहापति (संस्कृत रूप- गृहपति) की बदलती व्याख्या और सेठी-गहापति और सेठी जैसे शब्द के उद्भव से स्पष्ट है कि 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से 4थी शताब्दी ईसा पूर्व की अर्थव्यवस्था का विस्तार हुआ और वह समृद्ध था। गृहपति की उपस्थिति पहली बार ऋग्वेद में दिखाई देती है और उन्हें केवल घर के मालिक के रूप में निरूपित करने के लिए इस्तेमाल किया गया था ।[८] यहां तक कि पाणिनी ने अपने अष्टाध्याई में गृहपती शब्द का प्रयोग घर के मालिक के लिए ही किया है। [९] ग्रेग बेली और इयान म्बेट ने गहापति को कृषि अभिजात वर्ग के साथ जोड़ा ।[१०] उनका मानना था कि गहापति और सेठी नए उभरते शब्द थे।

सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक विशेषता इसके उत्पादन का तरीका है। हम सभी यह अच्छी तरह से जानते हैं कि संबंधित अवधि के उत्पादन का तरीका स्पष्ट रूप से कृषि था। कृषि विस्तार कर रही थी। वनभूमि का खेती के लिए इस्तेमाल करने का भी जिक्र मिला है। निश्चित रूप से जंगलों को साफ करने के लिए लोहे के उपयोग को जिम्मेदार ठहराया गया था । आमतौर पर यह माना जाता है कि लोहे का उपयोग कृषि अधिशेष का नेतृत्व करता है। हालांकि, इस लोहे के मुद्दे में कुछ जटिलता है, जिसे मैं बाद के खंड में चर्चा करूंगा। के.एम. श्रीमाली ने कृषि को अत्यधिक महत्व दिया और एक विचार रखा कि 500 ईसा पूर्व से शुरू होने वाली तीन शताब्दियों के दौरान क्षेत्रीय राज्यों का उदय और विस्तार कृषि के विकास और विस्तार का एक उत्पाद था।[११] उन्होंने डी.आर.चानना के कृषि के विस्तार के अध्ययन का भी उल्लेख किया है जिसमें चानना ने रामायण का उल्लेख किया था और देखा कि कैसे राक्षस के शिकार लोग अपने जीवन के संरक्षण के लिए विभिन्न तरीके से लड़ते थे।

उमा चक्रवर्ती ने दीघा निकया के समनाफला सुत्त में गहापति के संदर्भ में उल्लेख किया कि 'गहपति एक स्वतंत्र व्यक्ति होता है, जो अपनी भूमि पर खेती करता है, जो कर का भुगतान करता है, और इस प्रकार राजा का धन बढ़ता है'। यहाँ तक कि बाद के बौद्ध ग्रंथकारों जैसे मिलिंदपन्हो ने कृषि की गहपति के साथ पहचान जारी रखी। धर्मसूत्रों द्वारा कर्मकांडीय सामाजिक वर्गों में विभाजन से पूर्ण कृषि प्रधान समाज को मजबूत किया गया और 500-300 ईसा पूर्व में बुद्ध की शिक्षाओं द्वारा सम्मिलित किया गया।[१२]

कृषि औजारों के संदर्भ में, पूर्व मौर्य काल की मध्य गंगा घाटी में उनकी खोज की विशिष्टता है। साहित्यिक ग्रन्थों में लौह के विभिन्न संदर्भ मिलते हैं। उदाहरण के लिए, अयनगला या लोहे के फाल शब्द का उल्लेख बाद के पाली पाठ में किया गया है। हालांकि, मुख्य समस्या यह है कि पुरातात्विक साक्ष्य के साथ साहित्यिक साक्ष्य नहीं हैं। हालांकि, जैसा कि आर.एस. शर्मा ने कहा है, यह पारिस्थितिक कारणों से हो सकता है। पूर्वी यूपी और बिहार की अम्लीय, नम और गर्म जलोढ़ मिट्टी अत्यधिक संक्षारक साबित हुई है। यह मिट्टी लोहे की कलाकृतियों के संरक्षण के लिए खराब है। फिर भी , इसका मतलब यह नहीं है कि उनका उपयोग नहीं किया गया था। इसी अवधि में, और पहले भी, कृषि उपकरण और औजार ऊपरी गंगा घाटी और सतलज घाटी में पाए जाते हैं । ज्ञानधर्मकथा ने धान रोपाई की पूरी प्रक्रिया का संदर्भ दिया। प्रारंभिक बौद्ध उपदेशों में, क्षेत्र को तीन प्रकारों में विभाजित किया गया था- 1) सर्वश्रेष्ठ 2)मंझला 3)अवर, वनों और बांझ। इससे पता चलता है कि उस काल में कैसे कृषि महत्वपूर्ण हो गया।

कृषि अधिशेष का मुद्दा बहुत महत्वपूर्ण है। श्रीमाली यह भी बताते हैं कि संबंधित दौर का व्यापक व्यापार और शहरीकरण एक मजबूत ग्रामीण आधार के बिना कायम नहीं रह सकता था[१ ३] और यह माना गया कि कृषि को हमेशा व्यापार और मवेशी रखने पर प्राथमिकता दी जाती है । हालाँकि, अधिशेष की ऐसी राशि की उपस्थिति विलासिता के सामानों की उपस्थिति , सामाजिक स्तरीकरण और नौकरशाही संरचना के विस्तार से देखी जा सकती है , जिनका वेतन और अन्य वित्तीय सहायता करों से आई होगी।

कुछ विद्वानों का दृष्टिकोण अलग है। बेली और मैबेट ने विलियम एच. मैकनील के विचार का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि माना जाता है कि उस समय कोई अधिशेष उत्पादन नहीं था, जबकि कृषि उत्पादन अनुपजाऊ था। इसका कारण बौद्ध धर्म और जैन धर्म जैसी तपस्वी प्रथाओं का उद्भव था जिसमें आहार और शारीरिक संयम शामिल हैं। यह केवल एक छोटे से भोजन अधिशेष का उत्पादन करने वाले समाज में ही मुमकिन था।[१४] हालांकि, मैकनील का यह तर्क कमोबेश अधिशेष के विभिन्न प्रमाणों की एक साधारण अस्वीकृति की तरह लगता है। 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व की अवधि में श्रावस्ती , राजगृह , चम्पा , वैशाली आदि जैसे बड़े शहरी केंद्रों का उदय हुआ था , इसलिए इन शहरी केंद्रों के लिए कृषि अधिशेष के बिना खुद को बनाए रखना असंभव था ।

यह बताया गया है कि व्यापार के अन्य सामानों के साथ खाद्यान्नों में कुछ हद तक हलचल थी।[१५] कृषि अधिशेष की मौजूदगी को दास- कम्माकर (वस्तुतः दास के रूप में अनुवादित) नामक समूह की उपस्थिति से भी समझा जा सकता है । इस समूह का उपयोग कृषि श्रम के रूप में किया जाता है । इसी तरह, काशीपुत्र भारद्वाज जैसे 500 से अधिक धनी किसानों की मौजूदगी है। फिर भी, कभी-कभी भोजन की कमी के भी उदाहरण प्राप्त होते हैं।

आमतौर पर माना जाता है कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व लौह युग का काल है। हालांकि हमारे पास 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से पहले की अवधि में लोहे के सबूत मिले है, लेकिन इस अवधि के दौरान लोहे ने समाज के अंदर गहराई से प्रवेश किया था। सामान्य दृष्टिकोण यह है कि लोहे का उपयोग मध्य गंगा घाटी [१६] के विशाल वन को साफ करने के लिए किया जाता था और इसके कारण इस क्षेत्र में शहरी केंद्रों का उदय हुआ।

अधिक जटिल अर्थव्यवस्था के उद्भव और सुंभि चिह्नित सिक्कों के रूप में धातु की मुद्रा की उपस्थिति ने भी व्यापार के विस्तार की सुविधा प्रदान की। व्यापार के समष्टिगत संगठन की शुरुआत संघ , गण , श्रेणी, पुगा जैसे शब्दों के उपयोग से स्पष्ट होती है । व्यापार मार्गों की स्थापना की गई थी और उन्हें वनिपथ कहा जाता था । [१७] व्यापार मार्गों के साथ कई व्यापार के नगर विकसित हुए। इसी तरह, राजगृह व्यापार मार्गों से जुड़ा हुआ था , जिसके कारण इसे शहरीकरण में मदद मिली। बौद्ध ग्रंथों में, हमारे पास धातु विज्ञान, सामानों की विस्तृत श्रृंखला, चमड़े की कारीगरी, रेशम और कपास दोनों, बढ़िया मिट्टी के बर्तन, हाथी दांत के काम और लकड़ी के काम के संदर्भ हैं। [१८] समृद्ध व्यापार के अस्तित्व को शब्द सेठी के बढ़ते उपयोगों से भी समझा जा सकता है (संस्कृत- श्रेश्ठ)। आमतौर पर यह माना जाता है कि सेठी व्यापार के व्यवसाय से संबंधित है, वह व्यापारियों को धन के उधारकर्ता के रूप में मौजूद थे।

सुंभि चिह्नित सिक्के (कहपन), 430-320 ईसा पूर्व

साहित्यिक स्रोत हमें वैशाली की एक ऐसी छवि देते हैं जो एक समृद्ध राजधानी है जिसमें महत्वपूर्ण शिल्प और वाणिज्यिक कार्य होते थे। वैशाली इस काल का शिल्प-निर्माण केंद्र प्रतीत होता है ।[१९] एक पाली पाठ में चार व्यापक प्रकार के व्यापारियों का उल्लेख है- क) पापनिका (दुकानदार) ख) क्रय-विक्रयिका (खुदरा व्यापारी) ग) वासनिक (पैसे की निवेशक) घ) वनिज्ज (क्षुद्र व्यापारी)। [२०] हमें प्रसिद्ध उत्तरपथ व्यापार मार्ग का प्रमाण मिला है जो पूर्व में राजगृह से उत्तर- पश्चिम भारत के तक्षशिला तक फैले है। पाणिनि ने एक जनपद से दूसरे तक जाने वाली 1,000 गाड़ियों के साथ कारवां का भी उल्लेख किया। व्यापार के प्रति ब्राह्मणवादी रवैया सहायक नहीं था। व्यापारिक कार्य करने वाले व्यापारियों को ब्राह्मणवादी समाज में नीचा देखा जाता था। बौधयान द्वारा समुद्री यात्रा की अनुमति नहीं थी । जबकि बौद्ध ग्रंथों में समुद्री यात्राओं के कई उदाहरण दर्ज हैं और इसे मंजूरी दी गई है।[२१] यहां तक कि बौद्ध धर्म में पहली बार धर्मान्तरित व्यापारी वर्ग से भर्ती हुए थे । बौद्ध धर्म और इसकी शिक्षाएँ नए उभरते व्यापारिक वर्ग के अनुकूल थीं। बौद्ध ग्रंथों ने क्षेत्रीय और अंतर-क्षेत्रीय व्यापार के कई उदाहरणों का उल्लेख किया है। सबसे अधिक संभावना है कि बौद्ध धर्म का डेक्कन में विस्तार व्यापार से जुड़ा हुआ है।

जहां तक शहरी केन्द्रों और शहरीकरण की बात है, हमें साहित्यिक और पुरातात्विक साक्ष्य से पता चलता है कि राजगृह , वैशाली , कंपा , सवत्थी कुछ प्रमुख शहरों में आते हैं। दीघा निकाय के महापरिनिब्बाना सुत्त ने छह महान / बड़े शहरों (महानगरों) को संदर्भित करता है । [२२] इस अवधि के शहरी केंद्रों ने एक नई जटिलता और मानव बस्तियों के पैमाने का प्रतिनिधित्व किया और समकालीन राजनीतिक-सैन्य, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन के केंद्र बिंदु भी थे । पुराने आदिवासी परिवार के आसपास के शहरी और बंटे हुए लोगों ने अलग-थलग महिलाओं का एक वर्ग बनाया, जो वेश्यावृत्ति को आजीविका के स्रोत के रूप में लेती थीं ।पुर और नगर दो शब्द हैं जो शहरी बस्तियों के लिए उपयोग किए जाते हैं । पुर शब्द का बौद्ध ग्रंथों में बहुत कम उपयोग किया गया था । एक और शब्द, निगम , को गाम के साथ समान रूप से प्रयोग किया जाता है । पुर और नगर ने शहरी केंद्रों का प्रतिनिधित्व किया । [२३]

समापन टिप्पणी में, मुझे कहना होगा कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अवधि जटिल सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक प्रक्रिया के साथ-साथ महान दार्शनिक नवाचार की भी थी। इन पूरे चार घटकों में अंतर्निहित और तेजी से बदलाव हो रहे थे। राजनीतिक क्षेत्र में, गण- संघ या जनजातिय प्रमुख राजशाही राज्य की ओर संक्रमण कर रहे थे। सामाजिक क्षेत्र में इसने नए वर्गों का उदय देखा, जो नए प्रकार के दार्शनिक सिद्धांत से लाभान्वित हुए, जो उनके विकास के लिए अनुकूल था। आर्थिक क्षेत्र में, इसने शहरी चरित्र के उदय के साथ महान संक्रमण देखा। हो सकता है कि यह पूर्ण-विकसित शहरीवाद नहीं था, जैसा कि कुछ विद्वानों ने कहा है, लेकिन हम महान नवीनीकरण को नज़रंदाज़ नहीं कर सकते हैं जिसने निस्संदेह तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में शहरी केंद्रों को जन्म दिया। हालांकि उनमें से सबसे महत्वपूर्ण दार्शनिक क्षेत्र था। श्रामनिक, आजीविक और परिबज्जिका जैसे बौद्ध, जैन परंपरा तथा चारवाक आदि उभरे और अपना विशिष्ट सिद्धांत दिया। इनमें से बौद्ध और जैन धर्म आज तक टिके हुए हैं। फिर भी, सभी क्षेत्रों में परिवर्तन एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए थे।

---

१. चक्रवर्ती, उमा 1987, प्रारंभिक बौद्ध धर्म का सामाजिक आयाम दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस पृ.1
२. थापर, रोमिला, 1995, "उत्तर भारत में पहली सहस्राब्दी ईसा पूर्व" प्रारंभिक भारतीय इतिहास के हालिया परिप्रेक्ष्य में, बॉम्बे, लोकप्रिय प्रकाशन, पृ. 90
३. एर्दोसी, जी. ,1995, उत्तर भारत के शहर और पाकिस्तान में बुद्ध के समय 'एफ.आर. अल्चिन (एड), द आर्कियोलॉजी ऑफ अर्ली हिस्टोरिक साउथ एशिया, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 99
४. कोसंबी, डी.डी., 2006, प्राचीन कोसल और मगध, में B.P. साहू (सं।) आयरन एंड सोशल चेंज इन अर्ली इंडिया, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. ३५
५. श्रीमाली, के.एम., 2014, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल धरोहर: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ. 263
६. कोसंबी, डी.डी., 2006, प्राचीन कोसल और मगध, में B.P. साहू (सं।) आयरन एंड सोशल चेंज इन अर्ली इंडिया, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पीपी 38
७. श्रीमाली, के.एम., 2014, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल धरोहर: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स पृ. 264
८. चक्रवर्ती, उमा 1987, द सोशल डायमेंशन ऑफ अर्ली बौद्ध धर्म, दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस पीपी 65
९. उक्त पृ. 65
१०. बेली, ग्रेग और मैबेट, इयान (सं।) 2003, द सोशियोलॉजी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 52
११. श्रीमाली, के.एम., 2014, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल धरोहर: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ. 246
१२. शर्मा, राम शरण, 1996, प्राचीन भारत में सामग्री संस्कृति और सामाजिक गठन, दिल्ली, मैकमिलन, पीपी 90

१३. श्रीमाली, के.एम., 2014, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल धरोहर: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ. 268
१४. बेली, ग्रेग और मैबेट, इयान (सं।) 2003, द सोशियोलॉजी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 66
१५. चक्रवर्ती, उमा 1987, द सोशल डायमेंशन ऑफ अर्ली बौद्ध, दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस पृ. 20
१६. कोसंबी, डी.डी., 2006, प्राचीन कोसल और मगध, में बी.पी. साहू (सं।) आयरन एंड सोशल चेंज इन अर्ली इंडिया, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पीपी ३
१७. चक्रवर्ती, उमा 1987, द सोशल डायमेंशन ऑफ अर्ली बौद्ध धर्म, दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 21
१८. उक्त पृ. 22
१९. प्रसाद, बीरेंद्र नाथ, 2014, अर्ली हिस्टोरिक वैशाली में शहरीकरण, सी। बीसी 600-400 'डीएन झा (एड) में। प्रारंभिक भारत की जटिल विरासत: निबंध स्मृति में आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ. 220
२०. श्रीमाली, के.एम., २०१४, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल धरोहर: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रिब्यूटर्स पृ. 266
२१. शर्मा, राम शरण, 1996, सामग्री संस्कृति और सामाजिक गठन प्राचीन भारत, दिल्ली, मैकमिलन, पृ. १२४
२२. श्रीमाली, के.एम., 2014, 'पाली साहित्य और शहरीवाद' में, डी.एन. झा (सं।) प्रारंभिक भारत की जटिल विरासत में: निबंध इन मेमोरी ऑफ़ आर.एस. शर्मा, दिल्ली, मनोहर पब्लिशर्स और डिस्ट्रीब्यूटर्स , पृ. 248
२३. एर्दोसी, जी।, १ ९९ ५, उत्तर भारत और पाकिस्तान में बुद्ध के समय के शहर 'एफ.आर. अल्चिन (एड), द आर्कियोलॉजी ऑफ अर्ली हिस्टोरिक साउथ एशिया, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 114

साईं विश्वकर्मा
एम.ए. प्राचीन इतिहास

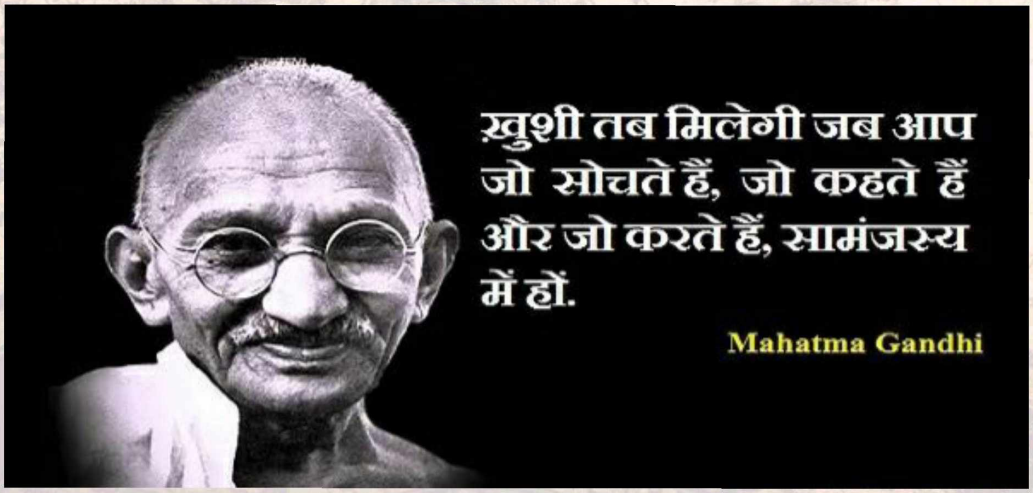

11 वीं और 13 वीं सदी के बीच आर्थिक परिवर्तन

सामाजिक और आर्थिक बदलावों का दौर भारतीय मध्यकालीन इतिहास में 11वीं से 13वीं शताब्दी में चला। इनमें जो बदलाव हुए उनका आंशिक कारण भूमि अनुदान प्रणाली थी जिसकी शुरुआत 5वीं शताब्दी में हो चुकी थी। जिनके परिणामस्वरूप समाज में आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन आए। ये भूमि अनुदान उन क्षेत्रों में भी दिए गए जो उपजाऊ नहीं थे या जनजातीय क्षेत्र थे। इन क्षेत्रों में जनजातियों के कृषिकीकरण की प्रक्रिया आरंभ हुई क्योंकि इन क्षेत्रों में खेतों में श्रमिकों की आवश्यकता होने लगी। 11वीं शताब्दी की शुरुआत से, कृषि क्षेत्र में कई बदलाव आए क्योंकि कुछ तकनीकी परिवर्तन हुए जो कृषि विस्तार को आगे ले गए। भूमि कर और जबरन श्रम के रूप में किसानों का शोषण होता था क्योंकि स्वामी और राज्य की आवश्यकता के अनुसार उन पर लगाया जाने वाला भूमि कर बहुत अधिक था। कृषि विस्तार और किसानों के शोषण की स्थिति क्षेत्र दर क्षेत्र में भिन्न थी क्योंकि उत्तर भारत की भूमि की स्थिति दक्षिण भारत की भूमि की स्थिति से भिन्न थी। उत्तर भारत की भूमि बहुत उपजाऊ थी जबकि दक्षिण भारत के अधिकांश क्षेत्र उपजाऊ नहीं थे, कावेरी नदी के आस पास का क्षेत्र अपवाद था। यही नहीं, बल्कि उत्तर भारत से दक्षिण भारत में अलग-अलग समाजिक और आर्थिक गतिविधियाँ भी भिन्न थीं। 13वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत की स्थापना भारतीय इतिहास का महत्वपूर्ण काल था क्योंकि यह स्थापना भारतीय समाज में कई बदलावों के साथ आई थी। इस शताब्दी में शहरीकरण महत्वपूर्ण मुद्दा था और समाज में बहुत से तनावों और कृषकों का शोषण चरम बिंदु पर था।

नया शासन अपने साथ शिल्प उत्पादन के क्षेत्र में बहुत से कौशलों को लाया। 13वीं शताब्दी के दौरान इक्ता की संस्था बहुत महत्वपूर्ण थी, यह राजस्व एकत्रित करने का राज्य का मुख्य साधन था। इक्ता प्रणाली की शुरुआत तुर्की के सुल्तानों की आवश्यकता से हुई थी। सुल्तानों के कुछ क्षेत्र जो राजधानी से दूर स्थित थे, सुल्तान द्वारा राजस्व वसूलने को किसी व्यक्ति को इक्ता प्रदान किया जाता था। इनको बदले में सुल्तान के लिए प्रशासनिक और सैन्य सहायता प्रदान करनी होती थी। मध्ययुगीन काल में, उत्पादन के तरीकों और संबंधों में कुछ बदलाव दिखाई देते हैं। यह समय निस्संदेह बड़े उपज उत्पादन और कृषि विस्तार का था। कुछ तकनीकी परिवर्तनों ने ग्रामीण विस्तार में योगदान दिया। कृषि के लिए सिंचाई महत्वपूर्ण थी। कुछ सिंचाई परिवर्तनों ने भी कृषि विस्तार और उत्पादन वृद्धि में योगदान दिया। अर्थशास्त्र में नदियों, तालाबों, टैंकों से सिंचाई का पानी प्राप्त करने की कई विधियों का भी उल्लेख है और प्राचीन समय में कुओं का। लेकिन इस दौरान सिंचाई प्रणाली में व्यापक बदलाव पेश किए गए, जैसे 12 वीं शताब्दी में पर्शियन व्हील का उपयोग -पश्चिम भारत में 13 वीं शताब्दी में देखने मिलता है। यह पानी के स्रोतों से पानी उठाने के लिए आमतौर पर खुले कुओं का उपयोग करता है। यह यंत्र पानी उठाने के लिए बैल या ऊंट द्वारा संचालित किया जाता था। इसका उपयोग 12 वीं और 13 वीं शताब्दी में राजस्थान और पंजाब में किया गया था। बर्टन स्टीन ने प्रारंभिक मध्ययुगीन दक्षिण भारत में कृषि के प्रभावशाली विस्तार का अवलोकन किया है। कुओं के निर्माण से खेती के विस्तार में और गहनता हुई। प्रारंभिक मध्ययुगीन भारत में पाए जाने वाले दो प्रकार के कुएँ थे। कच्चा कुआँ और ईंट का कुआँ। अमीर किसानों ने ईंट के कुओं का निर्माण किया क्योंकि उनका उपयोग लंबे समय तक किया जा सकता था लेकिन हम ईंट के कुओं की तुलना में अधिक कच्चे कुओं को पाते हैं। 528 कुओं में से, केवल 41 कुएँ ईंट के थे क्योंकि, गरीब किसान सिंचाई के लिए ईंटों से बने कुओं का निर्माण नहीं करवा सकते थे।

राज्य और संस्थाओं ने कृषि विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, राज्य ने कृषि को प्रोत्साहित किया और किसानों को कृषि सुविधाएं प्रदान कीं ताकि वे किसानों से अधिक से अधिक राजस्व एकत्र कर सकें। चोल शिलालेखों में सिंचाई प्रणाली का वर्णन है, जैसे तालाब और नहरें। तालाबों और नहरों के निर्माण का श्रेय चोल शासकों को जाता है। उदाहरण स्वरूप, राजेंद्र चोल ने सिंचाई के लिए चोलगंगा तालाब और नहर का निर्माण किया। ग्रामीण समाज में, ब्राह्मण और स्थानीय शासकों ने सिंचाई प्रणाली के विकास और प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तालाबों के रख-रखाव के लिए समितियों (अरिवेरिया) के मध्ययुगीन संदर्भ उपलब्ध हैं। कभी-कभी किसानों को समीपस्थ क्षेत्र में बीज बोने का अधिकार दिया जाता था, बदले में, उन्होंने तालाबों के गहरीकरण की जिम्मेदारी ली। नाडु एक महत्वपूर्ण संस्था थी चोल काल के दौरान दक्षिण भारत में। नाडु ने एक असेम्बली को भी निरूपित किया, खेतों और सिंचाई में सामुदायिक संपत्ति को साझा करने के लिए कॉरपोरेट निकाय।यह कृषि संसाधनों पर नियंत्रण रखता था।

सिक्के पर जहाज का चित्रण

इतिहासकार इरफान हबीब ने इस बात पर भी चर्चा की कि कैसे राज्य ने सिंचाई के साधन उपलब्ध कराए, कृषि के लिए टैंक बनाए। खाद की व्यवस्था भूमि की उर्वरता बढ़ाने का एक महत्वपूर्ण तरीका था। इस अवधि में कृषि के महत्व का इस तथ्य से संकेत मिलता है कि इस पर कई ग्रंथों की रचना की गई थी जैसे उत्तर में कृषि परासर और दक्षिण भारत में कुबान की पुस्तक। कृषि परासर और अन्य समकालीन ग्रंथों में कृषि से संबंधित कई विवरणों का वर्णन किया गया है जैसे कि वे तत्व जिनमें से खाद बनाई जाती थी। भूमि की उर्वरता बढ़ाने के लिए कुछ तत्व महत्वपूर्ण थे, जैसे गाय, बकरियाँ और भेड़ के बच्चे का गोबर। बीज बोने से पहले इन तैयारियों का उपयोग किया जाता था। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि परासर ने किसी भी प्रकार की सिंचाई प्रणाली के बारे में बात नहीं की, वह केवल वर्षा आधारित कृषि का उल्लेख करता है। परासर बीज रोपण की तकनीकों का वर्णन करता है। वैशाख महीना को इस कार्य के लिए सबसे उपयुक्त समय माना गया और मई - जुलाई के समय को चावल के लिए उपयुक्त माना गया। चावल की खेती के लिए प्रत्यारोपण और अन्य आवश्यक निर्देश दिए गए थे। इस समय की पुस्तकों में चावल, गेहूं के साथ-साथ फल और सब्जियों सहित अनाज की कई किस्मों का वर्णन है। सूर्य पुराण के अनुसार बंगाल में 50 से अधिक प्रकार के चावल की खेती की जाती थी।

11वीं सदी में किसानों का शोषण एक महत्वपूर्ण मुद्दा था। 11वीं-12वीं शताब्दी से कृषि का विस्तार शुरू हुआ, तो जो किसान इसमें लगे थे, उन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। भूमि मध्यस्थों ने कृषि उत्पादन के लिए अपनी मांगों को कर के रूप में किसानों पर थोपना शुरू कर दिया। वे किसानों से उपज का आधा हिस्सा एकत्र करते थे और किसानों के लिए इसका केवल एक हिस्सा छोड़ते थे, जिसके माध्यम से किसान मुश्किल से अपना पेट भर पाते थे। उन्होंने उन पर कई प्रतिबंध लगाए।

आर.एस. शर्मा ने तर्क दिया कि भूमि पर मध्यस्थों की बढ़ती निर्भरता के बाद राज्यों द्वारा उन्हें अधिक अधिकार दिए गए। इतिहासकार भारतीय किसानों को एक सर्फ़ के रूप में वर्णित करते हैं। वे मुख्य रूप से उनकी गतिशीलता पर लगाए गए कानूनी प्रतिबंधों ,भूमि को मुक्त करने के अधिकार की अनुपस्थिति और निश्चित रूप से उनके श्रम समर्पित करने का विषय के आधार पर वर्णन करते हैं । लेकिन इतिहासकार हरबंस मुखिया मुक्त किसानवाद की बात करते हैं। वह तर्क देते हैं कि जब हम भारतीय किसानों की गतिहीनता की समस्या के बारे में बात करते हैं तो एक पहलू को ध्यान में रखने की आवश्यकता है'हम शायद ही प्राचीन और मध्यकालीन भारत में एक विकसित श्रम या भूमि बाज़ार की बात कर सकते हैं,हालांकि कृषि श्रम और भूमि की बिक्री या गिरवी के उदाहरण हमारे स्त्रोतों में हैं । मुखिया ने भारतीय किसानों पर निष्कर्ष दिया कि उन्हें उत्पादन की प्रक्रिया के माध्यम से नियंत्रित किया गया। भारत में भूमि की उर्वरा शक्ति अधिक थी, इसलिए इसमें गुलामी के बढ़ने का कोई मौका नहीं था या कम था, क्योंकि किसानों राज्य को अधिक कर का भुगतान कर सकते थे। इन सुविधाओं ने मध्यकालीन भारतीय, सामाजिक और आर्थिक इतिहास को स्थिरता प्रदान की। मुखिया का तर्क है कि भारत में मिट्टी बहुत उपजाऊ थी। कहीं भी सर्फडॉम या जबरन श्रम की कोई गुंजाइश नहीं थी, लेकिन हमारे पास मध्य गैंगेटिक बेसिन में जबरन श्रम के कुछ रूपों के संकेत हैं, मध्ययुगीन समय में यह बेसिन बहुत उपजाऊ था।

सर्वपिदापरिहर्ता , सोत्पद्य मनविसित सर्वविसित

इससे पता चलता है कि किसानों को सभी प्रकार के जबरन श्रम के अधीन किया गया था। मध्ययुगीन समाज में जाति एक महत्वपूर्ण पहलू थी क्योंकि भूमि के मालिक ज्यादातर उच्च जाति के लोग थे। निम्न जातियों से वह अपने खेतों में काम करवाते थे। भूमिहीन श्रमिक बड़े भूमि मालिकों की भूमि पर खेती करते थे। बहुत से चार्टर्स किसानों के बारे में जानकारी देते हैं, जो यह स्पष्ट करते हैं कि श्रमिक को लाभार्थियों के आदेशों का पालन करना होता था। इन आदेशों ने हमें न केवल करों के भुगतान की जानकारी दी बल्कि उत्पादन और उत्पादन साधन की प्रक्रिया भी समझाई। लाभार्थियों ने किसानों की श्रम शक्ति को नियंत्रित किया। किसानों ने खेतों की जिसका प्रबंधन पर्यवेक्षक लाभार्थियों द्वारा होता था। लाभार्थी किसानों को मजबूर करते थे कि वे वही फसलें उगाएं जिनका आदेश वे दें।

बर्टन स्टीन ने दक्षिण भारतीय सामाजिक आर्थिक कारक के बारे में बताया है। दक्षिण भारतीय कृषि व्यवस्था उत्तर भारतीय कृषि व्यवस्था से अलग थी। उन्होंने हरबंस मुखिया द्वारा उठाए गए बिंदु की आलोचना की। उन्होंने कहा कि मिट्टी की उर्वरता गलत है। दक्षिण भारत के लिए मिट्टी की उर्वरता की अवधारणा लागू नहीं की जा सकती क्योंकि वहाँ की अधिकांश भूमि उपजाऊ नहीं थी। उन्होंने इसकी पहचान की है।

किसान अभ्यारण्य की तीन श्रेणियां -जैसे कि गीला अनाज , मिश्रित गीला और सूखा अनाज परक- बना कर खेती करते थे। प्रत्येक क्षेत्र में, भूमि की उर्वरता अलग थी। यह भी तर्क दिया कि दक्षिण भारतीय किसान केवल मुखिया के शब्दों के अनुसार मुक्त नहीं थे। किसानों के पास उत्पादन और उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण था। उत्पादन में उनकी निपुणता थी। 11 वीं से 13 वीं शताब्दी के बीच किसान विद्रोह एक महत्वपूर्ण मुद्दा था। किसानों ने भूमि लाभार्थियों का विरोध करना शुरू कर दिया क्योंकि वे उन पर अधिक कर लगा रहे थे।

11 वीं शताब्दी में चोल के समय में दक्षिण भारत में लाभार्थी उन्हें अपने अनुसार श्रम के लिए मजबूर कर रहे थे। चोल के समय में दक्षिण भारत में लाभार्थी और किसानों के बीच संघर्षों के प्रमाण मिलते हैं। दक्षिण भारत के अलावा उत्तर पूर्व भारत में कैवर्त विद्रोह बांग्लादेश में हुआ था, यह एक महत्वपूर्ण विद्रोह था। बंगाल में कुछ अनुदानों में 'करसनविरोधी स्थाना' शब्द का उल्लेख है। इस काल के कुछ ग्रंथों में ब्रह्महत्या शब्द का उल्लेख है, जो ब्रह्मणों की हत्या के लिए इस्तेमाल होता है। कर्नाटक के मामले में, आर.एन.नंदी ने ब्राह्मणों और किसानों के बीच संघर्ष के साक्ष्य प्रस्तुत किये हैं। चोल काल में, 1000 A.D के बाद भूमि के लिए लाभार्थी और किसान के बीच संघर्ष के कई उदाहरण मिलते हैं।

13 वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत की स्थापना भारतीय मध्ययुगीन इतिहास का विभाजन काल कहा जा सकता है क्योंकि इसके साथ नए आर्थिक बदलाव आए। यह शहरीकरण का समय था क्योंकि कुछ नई तकनीकें अरब सल्तनत के साथ भारत आईं। शहरीकरण प्रवासी कारीगरों और व्यापारियों पर आधारित था, वे शिल्प उत्पादन बढ़ाने के लिए उत्तरदायी थे। शिल्प उत्पादन में कई बदलाव इस समय उभरे। शहरीकरण के लिए बड़ी संख्या में लोगों को गुलाम बनाया जाना भी जिम्मेदार था क्योंकि इससे नए कारीगरों को सस्ता श्रमिक उपलब्ध होता था। दास को किसी भी तरह का श्रम करने के लिए मजबूर किया जाता था जो स्वामी को चाहिए। इक्ता दिल्ली सल्तनत की महत्वपूर्ण विशेषता थी। इक्तेदार को अतिरिक्त उत्पादन की अधिक से अधिक हिस्सेदारी की सुल्तान की मांग को पूरा करना होता था। इक्तेदार खेती और अन्य करों की वसूली कर सुल्तान के कोष में जमा करते थे और इसके साथ साथ सेना भी तैयार रखते थे।

खलीसा भूमि को सुल्तान द्वारा सीधे नियंत्रित किया गया था। 13 वीं शताब्दी के दौरान, मुक्तीस स्थानीय सरदारों और अनिर्दिष्ट क्षेत्र की लूट पर निर्भर थे। एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि दिल्ली सल्तनत की स्थापना से पहले, राय, राणा, राउत ने किसान की भूमि कर अपने पास रखते थे क्योंकि इस अवधि के दौरान कोई केंद्रीय शासन नहीं था, लेकिन अब इसका कुछ हिस्सा मुक्ती के माध्यम से एक केंद्रीय शासन को जाता था। इस्लामिक शासन के आने से किसानों की मुश्किलें कम नहीं हुईं बल्कि उनका अधिक शोषण हुआ। बलबन ने गांव वालों को अनुमति नहीं दी थी कि वह अपने भरण पोषण की आवश्यकता से अधिक अनाज रखें। इस प्रकार, हम देख सकते हैं कि 11 वीं से 13 वीं शताब्दी तक भारतीय मध्यकालीन इतिहास संक्रमणकाल का चरण था। कृषि क्षेत्र में, कई बदलाव हुए जैसे कि सिंचाई प्रणाली में तकनीकी परिवर्तन पर्शियन व्हील, कुएं, नहरें, तालाब आदि 11 वीं शताब्दी में पर्शियन व्हील सिंचाई प्रणाली के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण था। इसके कारण फसलों को आवश्यकतानुसार पानी मिलने लगा उत्पादन में वृद्धि हुई। फसलों की नई किस्मों का उपयोग होने लगा। कृषि विस्तार, राज्य द्वारा किसानों का शोषण इन शताब्दियों में महत्वपूर्ण मुद्दे थे। किसानों के प्रतिरोध को भी देखा गया था। 13 वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत की स्थापना ने शहरीकरण को बढ़ावा दिया।

अमित कुमार
एम.ए. इतिहास

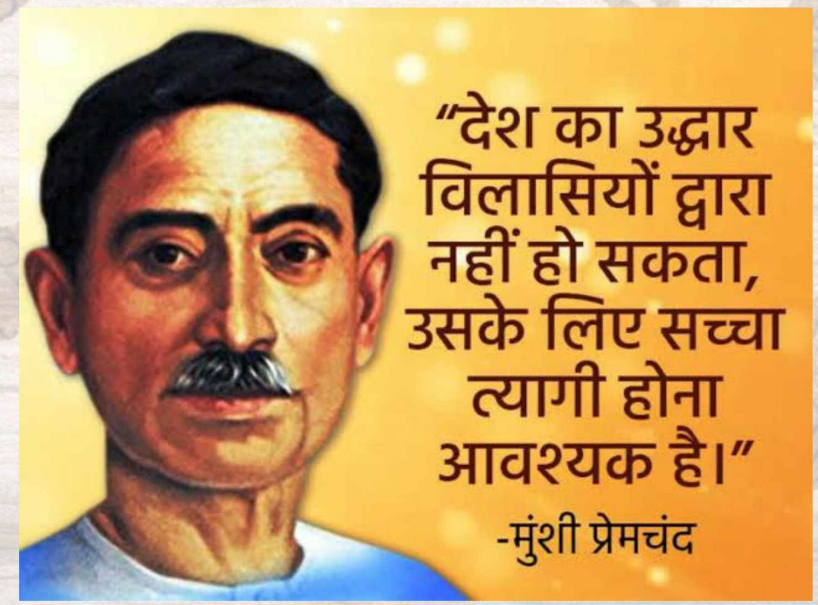

रघुवीर सहाय की काव्य-संवेदना

जब एक साहित्यकार पत्रकार की भूमिका अदा करे या एक पत्रकार साहित्यकार की भूमिका, दोनों ही स्थितियों में सृजित साहित्य अपना एक विशेष सामाजिक महत्त्व रखता है. इसका कारण यह है कि पत्रकारिता यथार्थ पर आधारित होती है, वहीं साहित्य सृजन के लिए संवेदना पक्ष अनिवार्य तत्व है. जब एक रचनाकार दोनों ही भूमिकाओं में होता है तो उसके द्वारा रचे साहित्य में सामजिक और राजनीतिक घटनाओं की गहरी समझ एवं अनुभव और संवेदना का समन्वय देखने को मिलता है. इस दृष्टि से रघुवीर सहाय का काव्य सृजन हिंदी काव्य धारा में अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' से काव्य क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने वाले रघुवीर सहाय का काव्य क्षेत्र अत्यंत विशाल एवं विस्तृत है. एक तरफ जहां रघुवीर सहाय सामाजिक वैषम्य, मानवीय-मूल्यों के ह्रास और राजनीतिक भ्रष्टाचार के प्रति घृणा और आक्रोश जाहिर करते हैं वहीं दूसरी तरफ उनका मन प्रकृति के रमणीय सौंदर्य को देखकर हर्षित हो उठता है।

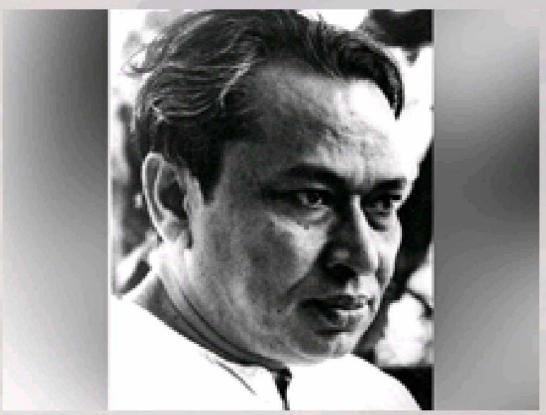

रघुवीर सहाय

'दूसरा सप्तक' के अलावा रघुवीर सहाय की कविताएं 'सीढ़ियों पर धूप में', 'आत्महत्या के विरुद्ध', 'हंसो-हंसो जल्दी हंसो', 'लोग भूल गए हैं', 'कुछ पते कुछ चिट्ठियां', 'प्रतिनिधि कविता' और 'एक समय था' में संकलित हैं. रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना की विवेचना करने के लिए हम उनके काव्य को मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित करके देख सकते हैं- सामाजिक संवेदना, राजनीतिक संवेदना, प्रकृति सम्बन्धी संवेदना।

रघुवीर सहाय के काव्य में व्यक्त सामाजिक संवेदना

जिस प्रकार एक पत्रकार का एक सामाजिक दायित्व होता है उसी प्रकार रघुवीर सहाय की न सिर्फ पत्रकारिता बल्कि कविताएं भी सामाजिक दायित्वों के प्रति प्रतिबद्ध हैं. जिसमें समाज के समस्त घात-प्रतिघात प्रतिबिंबित हैं । समाज की तमाम हलचलों को रघुवीर सहाय की रचनाओं में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है. एक नागरिक के उत्तरदायित्व की भावना से ओतप्रोत होकर रघुवीर सहाय ने अपने काव्य का सृजन किया है.

सामाजिक वैषम्य को रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं का मुख्य विषय बनाया है. समाज में उत्पन्न हुए दो वर्गों शोषक और शोषित के बीच वैषम्य की एक गहरी खाई होने के कारण शोषितों की उपेक्षा के प्रति अपने क्षोभ को प्रकट करते हुए रघुवीर सहाय ने शोषकों के प्रति अपनी घृणा एवं आक्रोश को व्यक्त किया है. अपनी एक कविता में सामाजिक विषमता के शिकार लोगों को कुछ इस प्रकार सजग करते हैं.

"हम ही क्यों तकलीफ उठाते जाएं
दुख देने वाले दुख दें और हमारे
उस दुख की गौरव की कविताएँ गाएँ
यह है अभिजात तरीके की मक्कारी

* * *

कम से कम वाली बात न हमसे कहिए
हमको तो अपने हक सब मिलने चाहिए."

इसी प्रकार 'हंसो-हंसो जल्दी हंसो' संग्रह की कविताओं में साधारण जन के अभावग्रस्त जीवन की पीड़ा का, शोषित जनता की त्रासद स्थिति का यथार्थ चित्रण हुआ है। इस संग्रह के संदर्भ में आलोचक नंदकिशोर नवल कहते हैं- "हंसो-हंसो जल्दी हंसो की कविताओं का मुख्य विषय राजनीतिक है लेकिन इन कविताओं का असली नायक साधारण जन है, जो कविताएं राजनीतिक है उनके पार्श्व में भी साधारण जन खड़ा है या फिर साधारण जन के नजरिए से ही कवि ने किसी राजनीतिक घटना या चरित्र को देखा है।"

देश के तथाकथित अभिजात वर्ग ने साधारण जनता को उनके हक से वंचित रखा और उनका शोषण किया 'हंसो-हंसो जल्दी हंसो' की पहली कविता 'पानी-पानी' इस संदर्भ में उल्लेखनीय है

"पानी पानी / बच्चा-बच्चा, हिंदुस्तानी / मांग रहा है..."

उपर्युक्त पंक्तियों में सामान्य जनता की लाचारी के साथ-साथ उनके अधिकार के प्रति जागरूक होने की मांग में आक्रोश और विद्रोह का स्वर सुनाई देता है।

रघुवीर सहाय का काव्य संग्रह 'आत्महत्या के विरुद्ध' की कविताएं व्यक्ति समाज संस्था राजनीति तथा जनतंत्र की पोल खोलती है. उनकी कविताओं में अभिव्यक्त उनकी चेतना आम नागरिक की चेतना बन गई है जिसमें समाज का जीता जागता स्वरूप एवं बदलते परिवेश की झंकार सुनाई पड़ती है. इस दृष्टि से रघुवीर सहाय की कविता 'अपने आप और बेकार' द्रष्टव्य है-

"यही मेरे लोग हैं
यही मेरा देश है
इसी में रहता हूं
अपने आप और बेकार
लोग लोग लोग चारों तरफ हैं मार तमाम लोग
खुश और असहाय
उनके बीच सहता हूं उनका दुख"

उपर्युक्त पंक्तियों में विडंबना की स्थिति परिलक्षित होती है, कि लोग एक ही साथ खुश और असहाय दोनों हैं. वे यह प्रतिपादित करते हैं कि समाज की स्थितियां बहुत ही भयावह हैं और चारों तरफ शोषण और उत्पीड़न का दृश्य व्याप्त है. विडंबना की स्थिति इसलिए है क्योंकि लोगों को पता ही नहीं है कि इस स्थिति को सुधारा कैसे जा सकता है।

एक सामाजिक कवि होने के कारण रघुवीर सहाय ने समाज की दलित पीड़ित एवं लाचार जनता से अपना सीधा संबंध रखने का प्रयास किया है. समाज की पीड़ित जनता के प्रति सहानुभूति वे इस प्रकार प्रकट करते हैं-

"कल मैंने उसे देखा लाख चेहरों में वह एक चेहरा
कुढ़ता हुआ और उलझा हुआ वह उदास कितना बोदा
वही था नाटक का मुख्य पात्र.."

रघुवीर सहाय ने सामाजिक विषमता के हर पहलू को अपने काव्य का हिस्सा बनाया है. न सिर्फ शोषक-शोषित अपितु जाति-पांति, ऊँच-नीच, अमीरी-गरीबी सभी तरह के भेदभाव इनके काव्य के विषय रहे हैं. गरीबी को लेकर उनकी लिखी कविता उल्लेखनीय है-

"हम सब जानते थे कि गरीबी क्या चीज होती है
हम सब गरीबी को बिसरा चुके थे
हम में से एक ने कहा रोज कम खाना मेरे दो बच्चों को तोड़ता
मरोड़ता कुतरता है रोज कम खाना मेरे बच्चों को तोड़ता
मरोड़ता कुतरता है रोज-रोज कुछ समझे"

रघुवीर सहाय अपनी इस कविता में गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याओं को केंद्र में रखकर भारत में आर्थिक विषमता और उसके कारणों की तरफ इशारा करते हैं. रघुवीर सहाय आर्थिक विषमता का सबसे बड़ा कारण वर्ण विभाजन को मानते हैं जिसने अब जातिवाद का रूप ले लिया है इस जातिवाद की विषमताओं को सहाय ने अपनी कविताओं में उभारने का प्रयास किया है. रघुवीर सहाय खुद लिखते हैं- "भारत के कितने गांवों में एक कुएं से द्विज और हरिजन मिलकर पानी लेते हैं. क्या 5% भी ऐसे गांव हैं."

रघुवीर सहाय की रचनाओं में यह मानवीय करुणा स्त्रियों और बच्चों की यातनामय जिन्दगी को चित्रित करते समय सर्वाधिक व्यक्त हुई है. रघुवीर सहाय का कहना है कि- "इन कविताओं में औरतें और बच्चे ज्यादा इसलिए आते हैं क्योंकि यह मेरे सबसे नजदीक हैं और इसलिए भी हो सकता है कि जिस तरह के मानसिक आध्यात्मिक जुल्म का दर्द मैं देखता हूं सबसे ज्यादा औरतों और बच्चों पर ही होता है. कम से कम उनके जीवन में प्रकट दिखाई देता है."

सहाय ने नारी की स्थितियों एवं समाज में उनके साथ होने वाले अत्याचारों को पूर्ण यथार्थवादी दृष्टि से चित्रित किया है. यह महत्वपूर्ण बात है कि सहाय की कविताओं में जो स्त्री और लड़की आती है वह छायावादी कविताओं की नारी से भिन्न है। छायावाद में नारी का चित्रण प्रेयसी, दुखनी बाला, अभागिनी, प्रेम विछोह में तड़पती-विलखती हुई इत्यादि के रूप में हुआ है. परन्तु रघुवीर सहाय ने अपनी रचनाओं में सर्वत्र नारी चेतना को मुखरित करने का प्रयास किया है उन्होंने समाज की दृढ़ता के लिए नारी के बरते जाने वाले भेद-भाव पर अनेक कविताओं में तीखा व्यंग्य किया है. वह पुरुष प्रधान समाज में औरतों को भी पुरुषों के समकक्ष लाकर खड़ा करने का प्रयास करते हैं जिससे कि नारी भी पुरुषों की तरह अपने अधिकारों का उपयोग कर सके.

""औरतों के चेहरे समाज के दर्पण है
पुरुषों जैसे
किंतु जो दर्द दिख जाते हैं उनमें मिठास
पुरुष गिडगिडाते हैं औरतें सिर्फ थाम लेती हैं बेबसी
कोई शरीर नहीं जिसके भीतर उसका दुख ना हो
तुम जब उस में प्रवेश करते हो वह नहीं मिलता
वही है बलात्कार
बाकी है प्रेम और दोनों के बीच की कोई स्थिति नहीं"

बलात्कार, शोषण और सदैव गैर बराबरी का दर्जा जीती रही औरतों की दयनीय दशा को सहाय की रचनाओं में देखा जा सकता है-

"नारी बिचारी है/ पुरुष की मारी है
तन से क्षुधित है/ मन से मुदित है
लपक-झपककर/ अंत में चित्त है"

पुरुष प्रधान संस्कृति में नारी दासी का प्रतीक बन कर रह गई है. 'औरत की पीठ' कविता में कवि स्त्री पर पुरुष द्वारा होने वाले अत्याचारों को बड़े मार्मिक और यथार्थ रूप से चित्रित करते हैं-

"औरत की पीठ उसका इतिहास है
उस पर जुल्म का असर वहां देखो
अपने सीने को अगर उसने छिपा रखा हो."

इसके अलावा स्त्री संबंधित अन्य कविताओं -'पढ़िए गीता', 'तुम जानो', 'गले हमारे डाल सखी', 'भय', 'अभी तक खड़ी स्त्री', 'उम्र', 'उसका निर्जन', 'स्त्री', 'औरत का सीना', 'कार्यवाही', 'चेहरा', 'अधेड़ औरत', 'बलात्कार', 'संघर्ष' - में इस बात को बड़े मार्मिक और यथार्थ रूप में उठाया है.

सहाय की कविताओं में एक व्यापक सामाजिक चेतना को बच्चों विषयक कविताओं से भी समझा जा सकता है. बचपन में बुनियादी सुविधाओं का अभाव और बड़े होने पर रोजगार जैसी समस्या हमारे देश की एक बड़ी चुनौती है. अभावग्रस्त बच्चे बड़े हो जाते हैं लेकिन उनका भविष्य आसुरक्षित है.-

"अब बड़े होने पर जनता हूँ बच्चे
बच्चे बड़े हो जाते हैं
लेकिन सुरक्षित नहीं होते.."

इस कविता में रघुवीर सहाय भारत में बेरोजारी और अवसर के अभाव जैसे जरूरी मुद्दों की तरफ ध्यान खींचते हैं. इसी प्रकार एक अन्य कविता 'बड़ा हो रहा लड़का' में रघुवीर सहाय बच्चों के बुनियादी जरूरतों के अभाव के साथ बड़े होने को त्रासद बताया है-

"बड़ा हो रहा है लड़का
उन औजारों के बिना
जिनसे वह बनता है और तोड़ता हुआ बड़ा होता
वह सिर्फ बड़ा हो रहा है."

उपर्युक्त पंक्तियों में आने वाली पीढ़ी का चित्रण है जो उचित मार्गदर्शन और संरक्षण नहीं मिल पाने की वजह से उपयुक्त विकास नहीं कर पाता. लड़का बड़ा तो हो रहा है मगर अनिवार्य आवश्यकताओं से वंचित सिर्फ बड़ा हो रहा है. शिक्षा और स्वास्थ्य ये दो औजार हैं जिनका बच्चों के विकास में महत्वपूर्ण स्थान होता है. इनका अभाव बच्चों को पंगु बना देता है जिसका समाज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है.

स्पष्ट है कि रघुवीर सहाय की सूक्ष्म एवं संवेदनशील दृष्टि समाज के सभी पक्षों एवं पहलुओं पर पड़ी है।

रघुवीर सहाय की राजनीतिक संवेदना

बतौर पत्रकार रघुवीर सहाय ने 'दिनमान', 'कल्पना', 'युग चेतना' आदि पत्रिकाओं में संपादन का कार्य किया था. वे तत्कालीन राजनीतिक घटनाओं को पत्रकार होने के नाते सूक्ष्म दृष्टि से देख रहे थे.उससे प्राप्त अनुभवों को उन्होंने प्रखर शब्दों में अभिव्यक्ति दी. डॉ. शोभा साहब राव राणे ने लिखा है- "रघुवीर सहाय की कविताओं में समकालीन सत्य यथार्थ रूप में अभिव्यक्त हुआ है. रघुवीर सहाय के काव्य संग्रहों में जो चेतना अभिव्यक्त हुई है उसका एक अंग राजनीतिक चेतना है." रघुवीर सहाय का झुकाव लोहिया के समाजवाद की ओर था फिर भी उन्होंने कभी भी समाजवादी दल की सदस्यता नहीं ली. उनका मानना था कि पत्रकारों एवं रचनाकारों को राजनीतिक दलों में नहीं शामिल होना चाहिए इससे उनमें पारदर्शिता नहीं रह जाती है.

जहां तक रघुवीर सहाय की कविताओं का प्रश्न है उसमें राजनीतिक चेतना की ध्वनि स्पष्ट तौर पर सुनी जा सकती है. ऐसा लगता है कि उनकी कविताओं का प्रमुख स्वर ही व्यवस्था विरोध है. कहने की आवश्यकता नहीं है कि यह व्यवस्था विरोध राजनीतिक है. उनकी 'आत्महत्या के विरुद्ध' और 'हंसो-हंसो जल्दी हंसो' काव्य -संग्रह में प्रमुख रूप से राजनीतिक चेतना की ही अभिव्यक्ति हुई है 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य- संग्रह के सर्जकीय वक्तव्य में रघुवीर सहाय लिखते हैं- "पहले हम उस दूसरी दुनिया को देखें जिसमें हमें पहले से ज्यादा रहना पड़ रहा है, लेकिन जिससे न लगाव साध पा रहे हैं ना अलगाव. लोकतंत्र मोटे बहुत मोटे तौर पर लोकतंत्र ने हमें इंसान की शानदार जिंदगी और कुत्ते की मौत के बीच चाप लिया है." इन पंक्तियों में एक तरफ रघुवीर सहाय की लोकतंत्र में आस्था दूसरी तरफ उसकी दुर्गति पर उनकी खीझ देखी भी देखी जा सकती है।

रघुवीर सहाय राजनीति के विकृत रूप की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं और व्यवस्था में आई विसंगतियों का तीखा विरोध करते हैं. इस विरोध का एक उदाहरण इन पंक्तियों में देखा जा सकता है-

"हर संकट भारत में एक गाय होती है
ठीक समय ठीक बहस कर नहीं सकती
राजनीति बाद में जहां कहीं से शुरू करो
बीच सड़क पर गोबर कर देता है विचार"

'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य-संग्रह में रघुवीर सहाय ने देश की राजनीतिक व्यवस्था को पूरी तरह काव्य का विषय बना कर बड़े ही साहस के साथ बेबाक ढंग से व्यक्त किया है इस काव्य- संग्रह की कविता है 'नेता क्षमा करें' इसमें कवि ने कहा है.-

"लोगों मेरे देश के लोगों और इनके नेताओं
मैं सिर्फ एक कवि हूं
मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता ना उसके साथ खाने के लिए गम
ना मैं मिटा सकता हूं ईश्वर के विषय में तुम्हारा संभ्रम
लोगों में श्रेष्ठ लोगों मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ आ नहीं सकता"

उपर्युक्त कविता में शासन व्यवस्था के प्रति तिलमिलाहट नफरत और आक्रोश है. कवि कुछ करना चाहता है, मगर कुछ कर नहीं पाता उसकी छटपटाहट व्यक्त होती है. कवि ने कहा है-

"कुछ होगा कुछ होगा अगर मैं बोलूंगा
ना टूटे ना टूटे तिलस्म का सत्ता
मेरे अंदर का कायर टूटेगा टूट
मेरे मन टूट अब सही तरह
अच्छी तरह टूट मत झूठ मूथ अब रूठ."

1967 में जब 'आत्महत्या के विरुद्ध' काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ तब देश को आजाद हुए 20 वर्ष हो गए थे. देश के स्वतंत्रता सेनानियों ने जिस आजाद भारत की कल्पना की थी उससे वर्तमान का भारत कोसों दूर था. इन 20 वर्षों में सत्ताधारियों ने आम जनता को केवल खोखले नारों और कभी ना पूरे होने वाले आश्वासनों से ठगा और लूटा. 'मेरा प्रतिनिधि' कविता में रघुवीर सहाय लिखते हैं-

"20 वर्ष हो गए भरम में उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जन्मी पली क्लेश में
बेगानी हो गए अपने ही देश में.."

इसी प्रकार 'हंसो-हंसो जल्दी हंसो' काव्य संग्रह में रघुवीर सहाय ने स्वतंत्रता के बाद की राजनीति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है. उनके लिए प्रधानमंत्री राजा है तो संसद राजदरबार 'दो अर्थों का भय' कविता में कवि संसद और संसद सदस्यों का उपहास करते हुए दिखते हैं-

"सभा में विराजे हैं बुद्धिमान
वे अभी राजा से तर्क करने को हैं
आज की कार्य सूची के अनुसार
इनके लिए वेतन पाते हैं वो
उनके पास उग्र स्वर ओजमयी भाषा है."

'भीड़ में मैकू और मैं', 'अधिनायक', 'नेता क्षमा करें', 'लोकतंत्र की मृत्यु' आदि कविताएँ राजनीतिक चेतना और विडंबना जनित स्थितियों को साकार करती हैं .

रघुवीर सहाय की कविता में प्रकृति चेतना

रघुवीर सहाय ने जिस संवेदना के साथ प्रकृति को अपने काव्य का अंग बनाया है. वह हिंदी साहित्य में बहुत कम देखने को मिलता है. सहाय की कविताओं में प्रकृति प्रायः उद्दीपन रूप में न आकर आलंबन रूप में आई है. रघुवीर सहाय के हर संग्रह में प्रकृति पर लिखी गई कविताएँ संकलित हैं. स्पष्ट है कि वे प्रकृति पर निरंतर लिखते रहे हैं जो कि उनके और प्रकृति के बीचे के सम्बन्ध को परिलक्षित करता है.'दूसरा सप्तक' में संकलित उनकी पहली और दूसरी कविता 'बसंत' और 'पहला पानी' में प्रकृति का मनोरम चित्र उपस्थित हुआ है. 'बसंत' में प्रकृति का सुंदर चित्र प्रस्तुत करते हुए रघुवीर सहाय लिखते हैं-

" वन की रानी हरियाली-सा भोला अंतर
सरसों के फूलों से जिसकी खिली जवानी
पकी फसल सा गरुआ गजरा गदराया जिसका तन
अपने प्रिय को आता देख लजाती जाती
गरम गुलाबी शरमाहट सा हल्का जाड़ा
स्निग्ध गेहूंए गालों पर कानों तक चढ़ती लाली जैसा फैल रहा है"।

'सीढ़ियों पर धूप में' काव्य संग्रह में भी प्रकृति, धूप, पेड़, खुशबू, फूल, वसंत, चांद, परिवर्तन, गोरैया, प्रेम और सौंदर्य से संबंधी कविताएं हैं. इनमें जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को क्षणों को पूरी समग्रता से लिया है. 'बौर' कविता में रघुवीर सहाय लिखते हैं-

"नीम में बौर आया
इसकी एक सहज गंध होती है
मन को खोल देती है गंध वह
जब मतिमंद होती है
प्राणों ने एक और सुख का परिचय पाया."

सुबह-सुबह छज्जे पर दो चिड़ियों का झगड़ना, चिल्लाना रघुवीर सहाय को कर्कस लगने के साथ-साथ सच्चा भी लगता है –

" हर दिन किसी किसी बात पर तिल्लौरी झगड़ती है –
मैंने तो एक नया अनुभव पहचाना है,
कुछ सच्चा लगता है चिड़ियों का चिल्लाना है."

रघुवीर सहाय का सबसे प्रिय ऋतु वसंत है. 'सीढ़ियों पर धूप में' संग्रह में वसंत पर कई कविताएं हैं. जैसे 'वसंत', 'वसंत आया', 'वसंत की हवाएं' आदि. जैसा कि ऊपर की कविताओं से स्पष्ट है कि रघुवीर सहाय का प्रकृति वर्णन महज कल्पना के आधार पर नहीं है, बल्कि वे उनकी खुद की अनुभूति का वर्णन है. एक उदाहरण और दृष्टव्य है-

"वही आदर्श मौसम है
और मन में कुछ टूटता सा
अनुभव से जानता हूं कि यह वसंत है".
कवि प्रकृति वर्णन में साधारण जीवन की यथार्थ स्थिति से जुड़ते हैं-
"चलती सड़क के किनारे लाल बजरी पर चुरमुर आए पांव तले
ऊंचे तरुवर से गिरे
बड़े-बड़े पियराये पत्ते
कोई छह बजे सुबह जैसे गर्म पानी से नहाई हो
खिली हुई हवा आई, खिड़की सी आई चली गई
ऐसे फुटपाथ पर चलते चलते
कल मैंने जाना कि वसंत आया."

इस प्रकार हम देखते हैं कि रघुवीर सहाय के हर एक काव्य संग्रह में प्रकृति सौंदर्य से सम्बंधित कविताएँ संगृहीत हैं .

निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि रघुवीर सहाय समाज और उसके हर अनुचित और अमानवीय गतिविधि के प्रति संवेदनशील हैं और पूरी मुखरता से उनका विरोध करते हैं. समाज में फैले व्यभिचार, शोषण, जाति-प्रथा, नारियों पर अत्याचार, सरकारी, अफसरों का भ्रष्ट होना, दफ्तरों की लापरवाही इत्यादि, शायद ही ऐसा कोई विषय हो जो रघुवीर सहाय की काव्य संवेदना के भीतर ना आया हो. रघुवीर सहाय ने सिर्फ सामाजिक ही नहीं राजनीतिक भ्रष्टाचार के प्रति भी अपना आक्रोश व्यक्त किया है. भारत में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन के नायकों ने स्वतंत्र भारत के लिए जो सपनें देखे उन सपनों को मिट्टीपलीद होते देख रघुवीर सहाय का मन खिन्न हो जाता है जिसकी गहरी वेदना उनकी कविताओं में झलकती दिखाई देती है. इन सब के अलावा प्रकृति के प्रति उनका सहज आकर्षण और उसका उतना ही सजीव वर्णन उनकी संवेदना पक्ष के मधुरतम भाग को परिलक्षित करता है।

सौरभ मौर्य
एम.ए .हिंदी

अधूरा सपना

रात के जब 10 बजते हैं तो बहुत सारे लोग बिस्तर पर लेट जाते हैं जबकि नींद किसी-किसी को आती है। और कुछ लोग तो बहुत बदकिस्मत होते हैं जो नींद के लिए दवाई का सहारा लेते हैं। कालू और घंटू भी औरों की तरह इंसान हैं, लेकिन दोनों का मामला थोड़ा-सा अलग है। जब रात में दोनों को नींद नहीं आती तो दोनों अपने इस हकीकत की भयानक दुनिया से सपनों की दुनिया में खो जाते हैं जहां वे सपने देख सकते हैं। हम जिस मॉडर्न स्टेट में रह रहे हैं वे दोनों भी इसी मॉडर्न स्टेट का हिस्सा हैं लेकिन अंतर यह है कि दोनों इस स्टेट हिस्सा होकर भी इससे वाक़िफ नहीं हैं। कालू और घंटू दो पक्के मित्र हैं। दोनों द्वारका से सटे पालम की झुग्गी में रहते हैं। कालू 10 साल का लड़का है और घंटू 9 साल का। दोनों के हालात एक जैसे हैं। पारिवारिक और आर्थिक स्थिति बिल्कुल एक समान है। कालू भी अपनी मां का इकलौता बेटा है और घंटू भी अपनी मां का इकलौता बेटा है। दोनों के पिता नहीं हैं। उनके पिता की एक साल पहले जहरीली शराब पीने से मौत हो गई थी। तब से ही दोनों कूड़ा बीन कर घर चलाने में माँ की मदद करते हैं। इलाके के नगर निगम स्कूल में दोनों किताब वाला बस्ता नहीं, कूड़ा उठाने वाली बोरी लेकर जाते हैं। रोज सुबह-सुबह खाली पेट और खाली बोरी लेकर निकलते हैं और शाम को पीठ पर बोरी लादकर आते हैं।

आज दोपहर में बोरी आधी ही भरी थी। चिलचिलाती धूप में सड़क के किनारे दोनों पीठ पर बोरी लादे चले आ रहे थे। धूप इतनी तेज थी कि सड़क पर कोई भी नहीं चल रहा था सिवाय एक-दो गाड़ियों के। जब दोनों डीडीए पार्क के सामने से गुजर रहे थे तो उन्हें लगा जब सड़क पर कोई नहीं चल रहा है तो वे क्यों चले? दोनों ने कूड़े की बोरी को पार्क की दीवार के साथ नीचे रख दिया और दीवार पर चढ़ गए। पेड़ की छांव में बैठकर थोड़ी-सी राहत मिली थी। दोनों की नजरें पार्क के अंदर पड़ी। पार्क में सुन्दर-सुन्दर फूल खिले हुए थे और झूले भी लगे हुए थे। पार्क में कुछ बच्चे क्रिकेट भी खेल रहे थे। कालू बच्चों को क्रिकेट खेलते देखने लगा पर घंटू को यह पसंद नहीं आया। वह झूले के पास जल्दी से पहुंचना चाहता था।

'चल कालू जल्दी से कूद जा' घटूं ने कालू की ओर देखते हुए कहा
'किधर?' कालू ने आश्चर्यचकित होकर पूछा।
'झूला झूलने' घंटू ने कहा

कालू उम्र में बड़ा था और समझदार भी था। उसे डर था कि कहीं झूले के पास जाने से सोसाइटी के लोग उनपर हमला ना कर दें। उसने घटूं की बात को टालते हुए कहा

'कुछ देर में अमीरों के बच्चे आ जाएंगे झूला झूलने, हमें देखकर डर जाएंगे हमें मार पड़ेगी| हम आज नहीं, फिर कभी आएंगे झुला झुलने ।'
'हम बच्चों से दूर ही रहेंगे ..वो देख वहां कोई नहीं है, झूला खाली है' घटूं ने झूला की तरफ इशारा करते हुए कहा
'तू पागल तो नहीं हो गया है?'
'मैं पागल दिखता हूं?' घंटू ने चिढ़ते हुए पूछा
'नहीं गधा दिखता है'
'गधा मैं नहीं तू है'
'तुझे तो पैसे का हिसाब लगाना भी नहीं आता | उस दिन कैसे लाला ने तेरे हिसाब में गड़बड़ किया था, उस टेम मैं नहीं आता तो लाला तुझे आधे ही पैसे देता । चला है मुझे गधा बताने!'

'कालू तू झूला झूलने चल रहा है या नहीं?' घंटू ने गुस्से में पूछा
'मुझे नहीं जाना'
'ठीक है मत आ मैं जा रहा हूं'
घंटू दीवार से कूद गया और तेजी से झूले की तरफ बढ़ गया।

' घंटूआऽऽ रुक जा' कालू ने जोर से आवाज लगाई लेकिन घंटू अनसुना करता हुआ झूले के पास पहुंच गया। कालू भी दीवार फांदकर हांफते हुए झूले के पास पहुंच गया। घंटू कालू को देखकर मन ही मन खुश हो रहा था। वह अब बेफिक्र होकर झूले पर चढ़ गया। कालू अब भी संकोच में था।

'कालू मुझे पीछे से धक्का लगा दे'
'नहीं आराम-आराम से ही झूल ज्यादा तेज झूलेगा तो गिर जाएगा'
'अरे यार तू कितना डरपोक है, मुझे कुछ नहीं होगा तू बस एक बार तेज धक्का लगा दे।'
'अच्छा ठीक है।' कालू ने घटूं के झूले को पीछे खींचकर हल्का सा धक्का दे दिया।
'सही से नहीं हुआ फिर से धक्का दे'

कालू ने फिर से एक धक्का दिया। इस बार भी घंटू संतुष्ट नहीं हुआ।
'कालू ने अपने हाथ में हनुमान जैसी शक्ति भर और जोर से धक्का दिया'
'नहीं बाबा नहीं, गिर गया तो लेने के देने पड़ जाएंगे, तेरी मां मुझे गरियाएगी, उन्होंने मुझे तेरा ख्याल रखने के लिए कहा है। तुझे कुछ हो गया तो मैं क्या जवाब दूंगा तेरी मां को?'
'तू सबसे बड़ा फट्टू है, देख यह लोहे की जंजीर से बंधा हुआ है कभी नहीं गिरेगा। बस तू एक बार जय श्रीराम बोलकर जोर से धक्का लगा दे।'
'ठीक है' कालू ने इस बार बिना डरे जोर से धक्का लगा दिया

घंटू स्वप्न लोक में पहुंच गया।वह सपना देखने लगता है कि सोसाइटी के बच्चों के साथ झूला झूल रहा है। उसके हम उम्र बच्चे उसके साथ खेल रहे हैं। उन बच्चों से उनकी दोस्ती हो गई है। सपने में ही बच्चों के साथ स्कूल भी जाने लगता है पर स्कूल के प्रांगण तक पहुंचने से पहले ही उसका सपना टूट गया। झूला भी रूक गया। घंटू को लगा झूले को कालू ने जानबूझ कर रोक दिया है।

'अबे कलुआ तूने झूला क्यों रोका? तूने स्कूल नहीं जाने दिया मुझे।' वह गुस्से से लाल होकर रोने लगा।
'चूप हो जा घंटू तू स्कूल नहीं जा रहा था तू बस सपने देख रहा होगा और सपने तो टूटने के लिए होते हैं!' कालू घंटू को समझाने की कोशिश कर रहा था।
'मुझे बच्चों के साथ स्कूल जाना है।' घंटू जिद्द करने लगा।
'दोस्त हम सिर्फ कूड़ा बीनने के लिए पैदा हुए हैं सपना बीनने के लिए नहीं। सपना देखना हमारे लिए पाप है जो सामने है उसी दुनियां में हमें जीना है। 'कालू बोलता जा रहा था पर घंटू को कुछ समझ नहीं आ रहा था। वह दीवार पर आकर बैठ गया, घंटू अभी भी रो रहा था। कालू भी दीवार पर चढ़ गया।
'घंटू तुझे फालतू में कौन-सा नशा चढ़ गया है? तू दिन में तारे कब से देखने लगा?' कालू ने घंटू के बगल में आकर बैठते हुए पूछा।

घंटू कुछ नहीं बोला, वह दीवार से नीचे उतर गया, कूड़े की बोरी अपनी पीठ पर लादकर सिसकते हुए अकेले चल दिया। दोनों की दोस्ती में ऐसा पहली बार हुआ था कि दोनों एक साथ कूड़े की बोरी अपने पीठ पर एक साथ न लादे हों। कालू भी दीवार से कूद गया, बोरी पीठ पर लादकर घंटू के पीछे चल पड़ा।

एक आदमी सामने फ्लैट से दोनों को दीवार से फांदते हुए देख रहा था। उसने दोनों को चोर समझ लिया। वह फटाफट नीचे उतर कर आया और दोनों का पीछा करने लगा। तपती सड़क पर कालू पीठ पीछे बोरा लिए घंटू के पीछे-पीछे चल रहा था। एक पत्थर अचानक से कालू के सर पर आकर लगा। कालू नीचे गिर गया। वह आदमी जो दोनों का पीछा कर रहा था उसी ने पत्थर मारा था। वह कालू के पास पहुंच कर उसकी तलाशी लेने लगा। उसकी बोरी को उलट दिया। कालू तपती जमीन पर लेटा कराह रहा था। उसके सिर से खून तेजी से बह रहा था। वह व्यक्ति बार- बार कालू से पूछ रहा था
'बोल क्या चुरा कर भाग रहा था?'

कालू के मुंह से कोई आवाज नहीं निकल पा रही थी। घंटू अब तक काफ़ी आगे निकल चुका था। वह आदमी कालू को वहीं छोड़कर घटूं का पीछा करने लगा। उसने जोर से घंटू को आवाज लगायी
'ऐ लड़के रुक , वहीं रुक'

घंटू ने पीछे मुड़ कर देखा कालू को पीछे न देखकर हतप्रभ रह गया। घंटू काफ़ी डर गया। इतने में वह शैतान आदमी उसके पास पहुंच गया। उसकी पूरी तलाशी ली और उसकी बोरी को पलट दिया। उसे कुछ नहीं मिला। उस राक्षस को अब भी शक था। उसने सौ नंबर पर कॉल कर दिया। घंटू कालू को पुकार रहा था। वह एकदम सहमा हुआ था। कालू का सिर खून से सना हुआ था। वह उठा और कूड़े को बोरी में भरने लगा। उसे अपनी नहीं, घंटू की बहुत चिंता हो रही थी। उसने जल्दी से कूड़े को बोरी में भरा और जिधर घंटू गया था उस तरफ़ आगे बढ़ा। कुछ ही दूरी पर घंटू मिल गया। उसे तीन-चार लोगों ने घेर रखा था। कालू को कुछ समझ नहीं आ रहा था उसके साथ क्या हो रहा है।

'छोड़ दो मेरे भाई को उसने कुछ नहीं किया है' कालू ने भीड़ से अनुरोध करते हुए कहा।
' तो तूने चोरी की है?' भीड़ में से किसी ने पूछा
'नहीं हमने चोरी नहीं की है' कालू ने उत्तर दिया
'ये दोनों अपना जुर्म ऐसे कबूल नहीं करेंगे इन लोगों से चोरी कबूल करवाने का एक ही तरीका है अच्छे से कूट डालो' भीड़ में से किसी ने सलाह दी। अब तक काफी भीड़ लग चुकी थी।

'इन्हें पुलिस के हवाले कर दो वे अपने आप चोरी कबूल करा लेंगे' एक महिला ने सलाह दी। तभी एक नौजवान भीड़ को चीरते हुए आगे आया। कालू की ओर देखते हुए बोला
' ओए तेरा नाम क्या है?'
'कालू'
'रहता किधर है?'
'पालम'
'पालम में कहां?'
'मेट्रो के पास में जो झुग्गी है वहीं'
'अच्छा'
'ये लड़का कौन है?' उसने घंटू की ओर इशारा करते हुए पूछा
'मेरा दोस्त है'
'तुम्हारे पापा क्या करते हैं?'
' पापा नहीं हैं'
'मम्मी तो है ना?'
'हां'
'कितने भाई बहन हो?'
'मैं अकेला हूँ '
'अच्छा, तुम स्कूल क्यों नहीं जाते हो तुम्हारी मां क्या करती है?'
'मेरी मां काम करती है'
'तो वो तुम्हें स्कूल क्यों नहीं भेजती है?'
'हम सपना देखने के लिए पैदा नहीं हुए हैं'
'ऐसा किसने कहा तुमसे? स्कूल जाना तो तुम्हारा अधिकार है'
'भाईसाहब! इन लोगों को बस चोरी करने का अधिकार है, ये लोग सुधरने वाले नहीं हैं । जनता का टैक्स सरकार चाहे इन पर जितना खर्च कर ले पेट तो चोरी करके ही भरेंगे' भीड़ में से एक बुजुर्ग ने नौजवान से कहा
' देश की गंदगी हैं' ये लोग' भीड़ से आवाज आई

'हां, हां ' भीड़ में से अधिकांश लोगों ने हामी भरी ।
'इनके माँ-बाप एक दो बच्चे नहीं दस-दस बच्चे पैदा करते हैं ।

देश आबादी का विस्फोट इन्हीं लोगों के चलते झेल रहा है' वह गुस्से से लाल था। मानों जैसे पूरे देश की समस्या इसी समाज से हो। उस नौजवान ने सबको संबोधित करते हुए कहा ।
'सभी समाज अपना भला चाहता है, कोई नहीं चाहता कि वह ग़रीबी में रहे, अभावों में जिंदगी गुजारे। सरकार इन बेघर लोगों पर पर्याप्त ध्यान नहीं देती है इसलिए ये अशिक्षित रह जाते हैं । हम लोग तो इन लोगों के साथ ऐसे ट्रीट करते हैं जैसे ये इस ग्रह के हो ही न । सच बात तो यह है कि हमलोग ही नहीं चाहते कि ये लोग ऊपर आएं' । 'भाई साहब आप इनकी तरफदारी न ही करें तो बेहतर है' उस फ्लैट वाले ने आदमी ने कहा ।

' माफ़ कीजिए अंकल जी पर इन दो मासूम बच्चों को मत सताइए इन्हें समझा बुझाकर घर भेज दीजिए' नौजवान ने आग्रह किया ।
'अरे ऐसे कैसे इन चोरों को छोड़ दें'!
'इन्होंने क्या चोरी की है?'
'मुझे क्या पता'
नौजवान को बहुत हैरानी हुई। कालू और घंटू दोनों भीगी बिल्ली की तरह खड़े थे।
'बेटा आपने क्या चोरी की है? चोरी करना बहुत बुरी बात होती है न' नौजवान ने दोनों बच्चों को समझाते हुए कहा।
'हमने कुछ भी चोरी नहीं की है' दोनों ने रोते हुए कहा
'बेटा सच-सच बता दो' नौजवान ने दोनों से आग्रह किया
'भैय्या सच कह रहा हूं हमने कोई चोरी नहीं की बस दीवार फांदकर कर पार्क में झूला झूलने गए थे' कालू ने रोते-रोते कहा।
'गेट से जाते... दीवार कूद कर जाने की क्या जरूरत थी?'
'धूप बहुत तेज थी,हम थक गए थे इसलिए आराम करने के लिए दीवार पर चढ़ गए'
'तुमने तो अभी कहा झूला झूलने के लिए पार्क में गया था' नौजवान को सन्देह होने लगा।
'अरे भाई ये ऐसे ही बेवकूफ बना रहा है इसे इतना पीटो की अपना गुनाह कबूल कर ले' भीड़ में से किसी ने सलाह दी ।

'हम सच कह रहे हैं हमने कुछ चोरी नहीं की , हम दोनों दीवार पर आराम कर रहे थे तभी घंटू ने झूला देखा इसे झूला झूलने का मन हुआ और दीवार फांद गया - मैंने मना किया था इसे' कालू ने नौजवान से कहा।
'यह देश संविधान से चलता है आप लोगों के अनुसार नहीं। संविधान ने सभी को एक समान अधिकार दिए हैं। इस पार्क में जितना आप लोग उठ-बैठ सकते हो उतना घंटू भी और उतना मैं भी। बाबा साहेब ने इन्हीं लोगों को बराबरी का हक देने के लिए संविधान निर्माण किया था।' नौजवान भीड़ को संबोधित कर रहा था। तभी पुलिस की गाड़ी आ गई। पूरी भीड़ का ध्यान पुलिस की गाड़ी की ओर चला गया। दोनों बच्चों में पहले से ही पुलिस का आतंक था। पुलिस को सामने देखकर दोनों भय से और कांपने लगे। एक पुलिस वाला दोनों बच्चों के पास आया दोनों को एक-एक डंडा मारा और कड़क आवाज़ में पूछा
'तूने क्या चोरी कर लिया?'
दोनों में से किसी की आवाज नहीं निकली

'यहीं कबूल कर ले थाणे नहीं ले जाऊंगा' पुलिस ने कूड़े की बोरियों को डंडे से टटोलते हुए कहा।
'सर आप इसकी तलाशी ले लीजिए चोरी का कुछ माल मिले तो ले जाइए' नौजवान ने पुलिस से कहा
'तू वकील है क्या?'
'जी नहीं, पर ये तो इन लोगों से पूछिए बच्चों ने चोरी क्या किया है आपको भी तलाशी लेने में आसानी रहेगी'
'हमें कैसे काम करना है अच्छी तरह जानते हैं? तुम्हारी सलाह की जरूरत नहीं'

'इस तरह से तो कोई भी किसी पर भी चोरी का आरोप लगा देगा'
'कानून सबका इसांफ करती है'
'इन बच्चों का भी इंसाफ कीजिए'
'चोर को सजा मिलती है इंसाफ नहीं'
'आपने बिना तलाशी के इन्हें कैसे चोर समझ लिया? इस तरह से तो कोई भी मुझपर शक करे और चोर साबित कर दे, फिर कानून का इंसाफ कैसा?'

नौजवान और पुलिस की छोटी-सी बहस चली। सूरज ढलने लगा, रोशनी कम होने लगी अँधेरा फैलने लगा। कालू और घंटू दोनों सहमे-से भीड़ में खड़े थे। किसी को कुछ पता नहीं था दोनों का क्या होने वाला है। पुलिस ने दोनों को आखिरी बार चेतावनी दी- 'चोरी कबूल कर ले'
'सर मेरा आपसे रिक्वेस्ट है प्लीज़ इनका तलाशी ले लीजिए या फिर दोनों को छोड़ दीजिए'
'तू ज्यादा बोल रहा है'
'आप लोग इस तरह किसी को भी परेशान करोगे तो बोलना पड़ेगा ही।'

पुलिस वाला तिलमिला गया। वह कुछ बोलता कि उससे पहले नौजवान आग्रह करता हुआ बोला
'सर, इन दोनों बच्चों के पापा नहीं है कूड़ा बीनकर पेट भरते हैं, इन्हें छोड़ दीजिए इनकी मां इंतजार कर रही होगी।'
पुलिस ने कहा 'हम छोड़ देंगे पर तुम्हें इनके साथ थाणे चलना होगा' नौजवान थाणे चलने को तैयार हो गया। पुलिस ने दोनों बच्चों को गाड़ी में बिठाया , नौजवान भी बैठा। कुछ दूर जाकर गाड़ी रुक गई। पुलिस ने नौजवान से कुछ चाय-पानी का खर्चा मांगा। वह जानता था यह भ्रष्टाचार है पर वह यह भी जानता था कि अभी सौ रुपए नहीं दिया तो उसे भी कोर्ट कचहरी का चक्कर काटना पड़ सकता है।

उसने अपने पर्स से सौ रूपए दे दिया। पुलिस ने तीनों को वहीं उतार दिया और दोनों बच्चों को हिदायत दी कि वे फिर कभी इधर दिखाई न दें।कालू ने नौजवान को शुक्रिया कहा। दोनों बच्चों ने पीठ पर कूड़े की बोरी लाद ली और घर की तरफ़ बढ़ गए। घंटू ने कालू से कहा 'भाई मुझे माफ़ कर दे मेरी वजह से यह सब हुआ'
'नहीं हमारे भाग्य में पहले से यही लिखा है।'
'उस हरामी ने मेरी वजह से तुझे पत्थर मारा ।'
'अब जो हो गया सो हो गया चल मां इंतजार कर रही होगी।'
'मेरी मां तो बहुत परेशान हो गई होगी'
'हां'

दोनों की मां एक साथ अपने लाल के घर आने का इंतजार कर रही थीं। कालू और घंटू दोनों घर पहुंच गए। कालू के सिर पर चोट देखकर उसकी मां बहुत घबरा गई। घाव को टटोलते हुए माँ ने पूछा 'कैसे लगी रे ये चोट?'

कालू असमंजस में था सच बोले कि झूठ। अगर सच बोलता तो उसकी मां को तकलीफ़ होती और वह लड़ने चली जाती। और वह झूठ बोलकर मां को अंधेरे में भी रखना नहीं चाहता था। उसकी मां ने दुबारा पूछा 'तेरे सर में चोट कैसे लगी?'
'मां मैं गिर गया था' कालू ने झूठ बोल दिया। तभी घंटू की मां भी वहां आ गई। वह कालू के सिर के घाव को देखते ही कालू के मां से बोली 'हल्का गर्म पानी से घाव को धो दो और सूखा कपड़ा लपेट दो'

कालू की मां ने वही किया। लेकिन तब भी उसे चिंता हो रही थी। डॉक्टर के पास ले जाने की उसकी हैसियत नहीं थी। उन्होंने कालू को रोटी खिलाकर लिटा दिया और खुद उसके बगल में बैठकर पंखा झलने लगी और अपनी फ़ूटी क़िस्मत को कोसने लगी। कुछ देर बाद कालू उठकर बैठ गया।

'मां सो जा तू क्यों जगी है?'
'बेटा तू आराम कर, मैं भी सो जाऊंगी।'
'तुने रोटी खाई?'
' नहीं खाया जा रहा है बेटा।'
'पर क्यों मां?'
'तू परेशान न हो.. सो जा बेटा... मैं खा लूंगी'
'पर कब खाओगी मां?'
'तुझे नींद आ जाएगी तो मैं भी रोटी खाकर सो जाऊंगी'
'ठीक है मां'

कालू सुबह अपनी मां से भी जल्दी उठ गया। कल जो हुआ था वह सब भूल चूका था। भोर के सन्नाटे में बस कालू के काम करने की आवाज आ रही थी। वह प्लास्टिक के कूड़े और कागज़ के कूड़े को अलग-अलग कर रहा था। दोनों मदों का अलग-अलग भाव मिलता है। कुछ देर बाद घंटू भी आ गया अपनी बोरी लेकर। बोरी भरने पर दोनों एक साथ लाला को कूड़ा बेच आए। दोनों फिर से बोरी भरने के लिए निकल पड़े। अभी भी सड़क पर सन्नाटा था। सूरज निकलने में समय था। दोनों स्कूल के पास पहुंचे तो घंटू को कल के सपने याद आ गए। वह स्कूल गेट के पास गया।पहले झांककर अंदर देखा फिर कालू की ओर मुड़कर देखा। वह सड़क किनारे कूड़ा बीन रहा था। सपने को पीछे छोड़कर घंटू दौड़कर कालू के पास चला गया।

रहमत
हिंदी ऑनर्स, तृतीय वर्ष

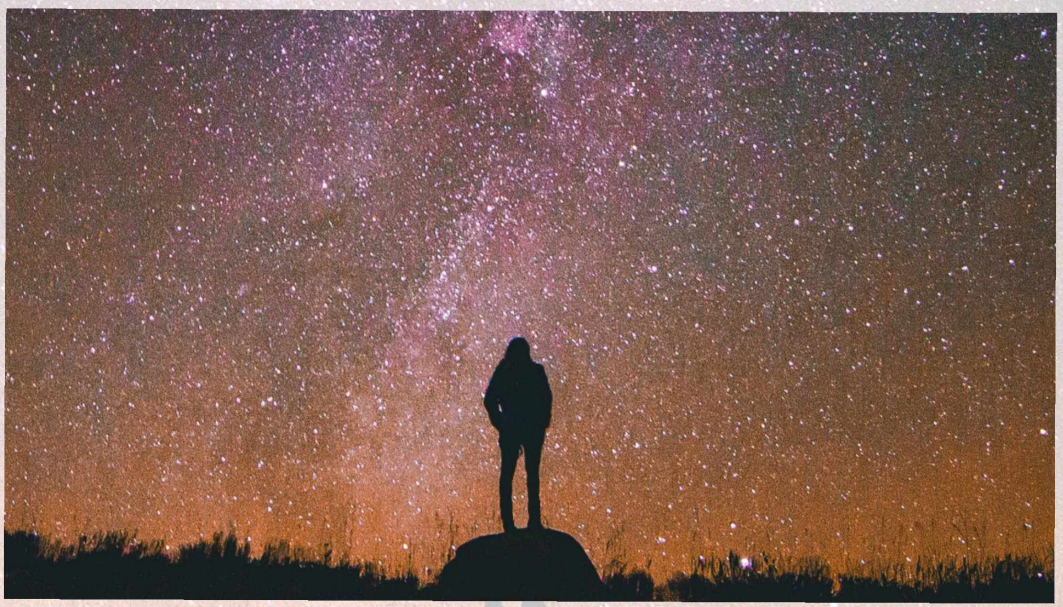

COVID-19 महामारी की पहचान और परिणाम

यह आलेख नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ़ इम्युनोलॉजी की वरिष्ठ शोधार्थी ज्योत्सना से की गयी बातचीत पर आधारित है जिसे हर्षिता शंकर ने प्रस्तुत किया है। यह आलेख अपने संक्षिप्त रूप में COVID-19 वायरस की पहचान और उसके आर्थिक सामाजिक परिणाम को संकेतित करता है।

COVID-19 महामारी को सदी की सबसे गम्भीर वैश्विक स्वास्थ्य आपदा और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद मानव जाति के सामने सबसे बड़ी चुनौती माना जा रहा है। जैसा कि COVID-19 नाम में निहित है; 'CO' का अर्थ है, कोरोना (Corona), 'VI' वायरस (Virus) , और 'D' बीमारी (Disease)के लिए, और 19 इसके होने के वर्ष को दर्शाता है। चीजें तेजी से बदलती हैं। यहां तक कि कुछ महीने पहले, हम में से अधिकांश जो कि वायरोलॉजिस्ट, माइक्रोबायोलॉजिस्ट या पशुचिकित्सक नहीं हैं, उन्होंने शायद कोरोना वायरस के बारे में कभी सुना भी नहीं था।

कोरोना वायरस पहले गैर-वैज्ञानिकों के बीच बेहतर रूप से 2003 में जाना जाने लगा। इसकी शुरुआत में वायरस पहली बार नजर में आया, जब इसके पहले प्रसिद्ध मानव रोग: सीवियर एक्यूट रेस्पिरेटरी सिंड्रोम (एसएआरएस) SARS-CoV नामक एजेंट ने उत्तरी अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, यूरोप और एशिया में फैलने से पहले दक्षिणी चीन में बीमारी का कारण बनना शुरू किया। वह वास्तव में बहुत डरावना था क्योंकि इसमें उच्च मृत्यु दर थी, लेकिन अब जो चल रहा है, उसकी तुलना में यह काफी सीमित और छोटा था। अब जब नोवेल कोरोनवायरस (SARS-CoV-2) दुनिया भर में भयावह स्थिति बना चुका है, वैज्ञानिक समुदाय इसे समझने और इससे लड़ने के लिए कदम उठा रहे हैं।

COVID-19 लोकप्रिय रूप से नोवल कोरोना वायरस के रूप में जाना जाता है, यह मनुष्यों में श्वसन विकार से जुड़ा हुआ है जिसे विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा वर्ष 2020 की पहली तिमाही में वैश्विक महामारी के रूप में घोषित किया गया है। कोरोना वायरस गैर-खंडित, एकल-फंसे हुए और सकारात्मक समझ वाले आरएनए जीनोम (RNA genome) के साथ आच्छादित वायरस का एक समूह है। यह आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण कशेरुक (वर्टेब्रेट्स, जैसे सूअर और मुर्गियां) को संक्रमित करने के अलावा, मानव मेजबान को संक्रमित करने और श्वसन रोगों का कारण बनने के लिए जाने जाते हैं। आणविक स्तर पर, कोरोना वायरस जीन अभिव्यक्ति के एक जटिल कार्यक्रम को पूरा करने के लिए कई प्रकार की असामान्य रणनीतियों को नियुक्त करते हैं।

अकेला कोरोना वायरस आमतौर पर एक विशिष्ट तरीके से अपने मेजबान को संक्रमित करता है, और संक्रमण तीव्र या लगातार हो सकता है। संक्रमण मुख्य रूप से श्वसन और मल या मौखिक मार्गों से होते हैं। इस वायरल परिवार की सबसे विशिष्ट विशेषता जीनोम का आकार है: कोरोना वायरस सभी आरएनए वायरस के बीच में सबसे बड़ा जीनोम है, जिसमें खंडित जीनोम वाले आरएनए वायरस शामिल हैं। भले ही यह कोरोनोवायरस का प्रकोप हम में से अधिकांश को अचानक लगता है, लेकिन यह एक वस्तु पाठ है कि वैज्ञानिक खोज का धीमा और स्थिर काम वास्तव में क्यों मायने रखता है।

यह पूरी दुनिया में तेजी से फैल गया है, जिससे संपूर्ण मानव आबादी के लिए भारी स्वास्थ्य, आर्थिक, पर्यावरण और सामाजिक चुनौतियां हैं।कोरोनोवायरस का प्रकोप वैश्विक अर्थव्यवस्था को गंभीर रूप से बाधित कर रहा है। लगभग सभी राष्ट्र रोगियों के परीक्षण और उपचार द्वारा बीमारी के संचरण को धीमा करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, संपर्क अनुरेखण के माध्यम से संदिग्ध व्यक्तियों को शांत करना, बड़ी सभाओं को प्रतिबंधित करना, पूर्ण या आंशिक लॉकडाउन को बनाए रखना आदि।

कुछ हद तक COVID-19 का प्रकोप वैश्विक पर्यावरणीय परिवर्तनों का अप्रत्यक्ष परिणाम माना जा सकता है। मानव जीवन पर इसके परेशान करने वाले प्रभावों के अलावा, नोवेल कोरोनोवायरस बीमारी (COVID-19) न केवल चीन, अमेरिका, या भारत की अर्थव्यवस्था को पूरी तरह से धीमा करने की क्षमता रखती है बल्कि पूरे विश्व की अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचा रही है। मुख्य बात यह है कि कई देशों में स्वास्थ्य सेवाएं आंशिक रूप से या पूरी तरह से बाधित हो गई हैं। कई लोग जिन्हें कैंसर, हृदय रोग और मधुमेह जैसी बीमारियों के इलाज की जरूरत है और साथ ही साथ ज्यादा सावधानी की भी जरूरत है, उन्हें स्वास्थ्य सेवाएं और दवाएं नहीं मिल रही हैं जिनकी उन्हें कोविद-19 महामारी शुरू होने के बाद भी जरूरत थी।

कोविद -19 महामारी सिर्फ शारीरिक रूप से लोगों को प्रभावित नहीं कर रही है यह उनकी मानसिक और वित्तीय स्थिति को भी नष्ट कर रही है।वैज्ञानिक समुदाय यह समझने में असमर्थ हैं कि क्या भय, चिंता और तनाव इस समय कथित या वास्तविक खतरों के लिए सामान्य प्रतिक्रिया है।लोगों को अकेलेपन, अनिश्चितता और विषाणु के अनुबंध का डर है। रोग के संचरण की इस आशंका और चिंता ने लोगों और समुदायों में एक दूसरे के ख़िलाफ़ या सामाजिक अलगाव और कलंक के लिए पक्षपात या पूर्वाग्रह उत्पन्न कर दिया है। ऐसे व्यवहार के परिणामस्वरूप शत्रुता, अराजकता और अनावश्यक सामाजिक व्यवधानों को बढ़ावा मिलता है जिसके कारण स्वास्थ्य प्रणाली में गलतियां बढ़ सकती हैं और उससे रुग्णता बढ़ती है।

जब स्वास्थ्य सेवा प्रणाली विफल हो जाती है, तो लोगों को अनिश्चित लॉकडाउन में प्रवेश करने के लिए मजबूर होना पड़ता है और गोपनीयता का उल्लंघन भी झेलना पड़ता है। उपरोक्त स्थिति ने नौकरियों, व्यापार और रोमांच के लिए दुनिया भर में यात्रा करने की स्वतंत्रता को छीन लिया है। कोविद -19 के प्रकोप के बाद से दुनिया भर में सूक्ष्म सामुदायिक प्रणाली (माइक्रो कम्युनिटी सिस्टम) की स्थापना शुरू हो गई है। जनसंख्या शारीरिक और सामाजिक रूप से अलग-थलग है। इसलिए अकेलेपन और उसके अनुक्रम की अनिवार्यता के लिए योजना बनाना आवश्यक है और हस्तक्षेप करने के तरीके विकसित करने की जरूरत है। भौतिक दूरी ये पर्याप्त उपाय होने के पश्चात भी डिजिटल प्रौद्योगिकियों के उपयोग से कुछ हद तक समाज जुड़ा हुआ है।

सामान्य संरचनाएं जहां लोग एकत्रित होते हैं, चाहे पूजा स्थल, व्यायामशाला या योग शाला, सभी ऑनलाइन गतिविधियों का आयोजन कर उस सामाजिक गड़बड़ी के पहले जैसा माहौल बनाने की कोशिश में लगे हैं। कुछ कार्यस्थल आभासी कार्यक्षेत्र बना रहे हैं जहां लोग काम कर सकते हैं और वीडियो कनेक्शन से जुड़ सकते हैं, जिससे वे आभासी तौर पर अकेले नहीं हैं।

समस्या यह है कि कुछ वर्ग हाशिए पर और अलग-थलग पड़े हुए हैं, जिनमें बुजुर्ग, अशिक्षित अप्रवासी, बेघर व्यक्ति और वे लोग भी शामिल हैं, जिन्होंने लॉकडाउन के दौरान नौकरी खो दी है। अनिश्चित लॉकडाउन के साथ-साथ संसाधनों की भारी कमी और बढ़ते वित्तीय घाटे से उन भावनात्मक संकटों में वृद्धि होगी जिसका लोग को अभी सामना कर रहे हैं । घर से काम करने की नई वास्तविकताओं, अस्थायी बेरोजगारी, बच्चों की घर से हो रही स्कूली शिक्षा और परिवार के अन्य सदस्यों, दोस्तों और सहकर्मियों के साथ शारीरिक संपर्क की कमी का सामना करते हुए, यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने मानसिक, साथ ही अपने शारीरिक स्वास्थ्य की भी देखभाल करें।

एक स्वस्थ तरीके से तनाव के साथ मुकाबला करने से आपको, उन लोगों की परवाह होगी जो आपके बारे में सोचते हैं और आपके समुदाय को मजबूत बनाते हैं।

ज्योत्सना (वरिष्ठ शोधार)
नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ़ इम्युनोलॉजी

समन्वय

आत्मा राम सनातन धर्म महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

धौला कुआँ, नई दिल्ली
फोन: 011-24113436, 24117508, 24111390
वेबसाईट: www.arsdcollege.ac.in